पितर

हमारे अदृश्य सहायक





- श्रीराम शर्मा आचार्य

पितर : हमारे अदृश्य सहायक



लेखक:
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
डॉ० प्रणव पण्ड्या (एम०डी०)

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१४ मूल्य : १८.०० रुपये

विषय–सूची



परोक्ष जगत् से सम्पर्क : हर दृष्टि से लाभकारी

जिस प्रकार मनुष्य चेतना और पदार्थ सम्पदा का समन्वित पिण्ड है। ठीक उसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड भी विराट् पुरुष का सुविस्तृत शरीर है। उसमें भी स्तर के अनुरूप असीम पदार्थ और अनन्त चेतन भरा पड़ा है। दोनों की मिलीभगत से यह सृष्टि व्यवस्था चल रही है। उत्पादन, परिपोषण और परिवर्तन की त्रिविध कार्य पद्धति अपनाए हुए स्रष्टा का यह स्थूल शरीर पदार्थ समुच्चय अपने हिस्से का काम पूरा करने में निरत है। स्रष्टा का सूक्ष्म शरीर वह है जिसमें स्थूल जगत् की प्रत्यक्ष घटनाओं के लिए उत्तरदायी अदृश्य क्रिया–प्रक्रिया बनती बिगड़ती रहती है। उसे परोक्ष वातावरण भी कह सकते हैं। इसी के अनुरूप संसार की अनेकानेक परिस्थितियाँ बनती और घटित होती रहती हैं। सूक्ष्म जगत् में भूत और भविष्य के सभी प्रवाह विद्यमान हैं। जिन्हें समझ सकने पर इस अविज्ञात की जानकारी मिल सकती है, कि भूतकाल में क्या घटित हुआ था और भविष्य में क्या होने जा रहा है?

वर्षा, आँधी, तूफान, हिमपात मौसम आदि की पूर्व जानकारी लक्षणों को देखते हुए अनुमान की पकड़ में आ जाती है। इसी प्रकार अदृश्य जगत् में चल रही सचेतन हलचलों को देखते हुए भविष्य सम्भावनाओं का, भूतकाल की घटनाओं का और वर्तमान की परिस्थितियों का पूर्वाभास प्राप्त किया जा सकता है। सामान्यतः मनुष्य की समझ अपने क्रिया–कलाप का निर्धारण करने में ही काम आती है। उसे परिस्थितियों की पृष्ठभूमि तथा सम्भावना के सम्बन्ध में कोई अलग से जानकारी नहीं

होती। सूक्ष्म जगत् से सम्पर्क साध सकना यदि सम्भव हो सके, तो अँधेरी गलियों में भटकते रहने की अपेक्षा सुनिश्चित प्रकाश का अवलम्बन मिल सकता है। यह स्थिति जिन्हें भी प्राप्त होगी, वे सम्भावनाओं को समझते हुए स्वयं उपयुक्त कदम उठाएँगे और दूसरों को अवसर के अनुरूप सतर्क रहने का मार्ग दर्शन करेंगे।

अदृश्य जगत् अपने आप का एक परिपूर्ण संसार है। मनुष्यों की अपनी दुनिया समाज व्यवस्था; रीति–नीति एवं दिनचर्या है। इसी प्रकार जलचरों की, कृमि–कीटकों की, वन्य पशुओं की, पक्षियों की, धूलि में पाये जाने वाले जीवाणुओं की, वायरस, बैक्टीरियाओं की अपनी–अपनी दुनिया है। उनकी समस्याएँ, सुविधाएँ, आवश्यकताएँ, कठिनाइयाँ, इच्छाएँ मनुष्यों की दुनिया से सर्वथा भिन्न ही समझी जा सकती हैं। पड़ोस में रहते हुए भी यह अनोखा संसार एक–दूसरे की परिस्थितियों से प्रायः अपरिचित ही बना रहता है। पालतू पशुओं, पक्षियों और मनुष्यों के बीच उदर पोषण जितना ही सम्बन्ध रहता है, शेष का तो किसी से किसी प्रकार का आदान–प्रदान भी नहीं चलता और न कोई एक दूसरे के लिए विशेष सहयोगी ही सिद्ध होता है।

ठीक इसी प्रकार अदृश्य लोक में सूक्ष्म जीवधारियों की एक अनोखी दुनिया है। शरीर छोड़ने के उपरान्त नया जन्म मिलने की स्थिति आने तक मनुष्यों को इसी क्षेत्र में रहना पड़ता है। भूत–प्रेतों की, देवी–देवताओं की, लोक–लोकान्तरों की, स्वर्ग–नरक की चर्चा प्रायः होती ही रहती है। ऐसे प्रमाण उदाहरण आये दिन मिलते रहते हैं जिनसे दिवंगत आत्माओं के सूक्ष्म शरीर धारण किए हुए दिन गुजारने और यदा–कदा मनुष्यों के साथ सहयोग या विग्रह करने की जानकारियाँ मिलती हैं। मनुष्यों की तरह ही उनकी भी एक दुनिया है। चूँकि वे सभी मनुष्य शरीर को छोड़कर ही उस क्षेत्र में पहुँचे हैं, इसलिए स्वभावतः इस संसार के साथ सम्पर्क साधने की इच्छा होती होगी। कठिनाई एक ही है कि जीवित या दिवंगत आत्माओं में से किसी को भी यह अनुभव नहीं

है कि पारस्परिक सम्पर्क–साधना और आदान–प्रदान का सिलसिला चलाना किस प्रकार सम्भव हो सकता है। प्रयत्न में सफलता न मिलने पर कई प्रेतात्माएँ अनगढ़ उपाय करती हैं। मूलतः मनुष्य इस अनुभूति से भयभीत एवं आतंकित होते हैं। जब कि उनमें से कितने ही प्रियजनों के साथ स्नेह, सौजन्य एवं सहयोग का सिलसिला चल सकता है। एक देश दूसरे देश की–एक समाज दूसरे समाज की–एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के स्नेह सहयोग में बँध जाने पर उपयोगी परिणाम उपलब्ध करते हैं, फिर कोई कारण नहीं कि कुछ समय पूर्व के अपने ही जैसे मनुष्यों की इसलिए उपेक्षा करें कि वे शरीर खो बैठे और सूक्ष्म शरीर में–अन्तरिक्ष में निवास कर रहे हैं। आत्मिकी में वह सामर्थ्य है कि वह इन दोनों लोगों के बीच भावनात्मक एवं क्रियात्मक सहयोग का द्वार खोल सके।

क्रुद्ध, विक्षुब्ध, रुग्ण, व्यथित, पीड़ितों को सहकार देने वाली उदार मानवी करुणा–विपन्न स्थिति में पड़े हुए प्रेतात्माओं की–विशेषतया सहयोग की आशा अपेक्षा करने वाले दिवंगत सम्बन्धियों की सहायता करना तो सरलतापूर्वक सम्भव हो सकता है। दूसरों को हानि पहुँचाने में निरत, क्रुद्ध आत्माओं को सान्त्वना देकर उनके आक्रोश प्रतिशोध से कष्ट उठाने वालों को राहत दिलाई जा सकती है। प्रेत–क्रुद्ध, असन्तुष्ट, दुर्गतिग्रस्त आत्माओं को कहते हैं और पितर वे हैं, जो श्रेष्ठ समुन्नत जीवन जीते रहे हैं। वे जीवनकाल की तरह, मरणोत्तर स्थिति में पहुँचने की तरह किसी के आने–किसी को सहायता पहुँचाने और परिस्थितियाँ अच्छी बनाने में योगदान करना चाहते हैं। ऐसी आत्माओं की सहायता से कितनों ने ही कितने ही प्रकार के महत्त्वपूर्ण अनुदान प्राप्त किए हैं। यह प्रकरण ऐसा है जिसे आत्मिकी के आधार पर अधिक अच्छी तरह–अधिक व्यापक एवं योजनाबद्ध प्रयोजनों के लिए खोला जा सकता है। निश्चय ही इस प्रक्रिया में दोनों ही पक्षों को लाभ मिलेगा और सन्तोष होगा।

पितर कहाँ होते हैं, कैसे दीखते हैं एवं उनसे सम्पर्क स्थापित करने की प्रक्रिया किस आयाम में किस वैज्ञानिक आधार पर सम्पन्न होती है, यह स्थूल बुद्धि से नहीं समझा जा सकता। इसके लिए चिंतन को व्यापक बनाकर सूक्ष्म जगत् की संरचना समझनी होगी।

शास्त्रों में विभिन्न लोकों का वर्णन मिलता है जिनमें जीवन्मुक्त आत्माएँ विचरण करती हैं एवं शरीरधारी पृथ्वीवासियों की मदद हेतु सतत् तत्पर रहती हैं। इन लोकों को भौतिकी के "डायमेन्शन" के आधार पर नहीं समझा जा सकता; क्योंकि सूक्ष्म होने के कारण इनकी स्थिति चतुर्थ आयाम से भी परे होती है। किन्तु साधना पुरुषार्थ से अर्जित दिव्य दृष्टि सम्पन्न शरीरधारी साधक स्वयं को सूक्ष्म रूप में बदलकर अथवा स्थूल स्थिति में इन आयामों के रहस्यमय संसार का दिग्दर्शन कर सकते हैं। इस संसार में अपने कर्मों के अनुरूप सूक्ष्म आत्माएँ फल पाती हैं एवं उसी आधार पर एक निश्चित अवधि तक उन्हें उसमें रहना पड़ता है। यह एक सुनिश्चित तथ्य है।

शास्त्रों के अनुसार जन्म–मरण के चक्र में घूमता हुआ जीव स्वर्ग–नरक, प्रेत–पिशाच, पितर, कृमि–कीटक, पशु एवं मनुष्य योनि प्राप्त करता है। इस दौरान उसे जो–जो गतियाँ प्राप्त होती हैं, शास्त्रों में उन्हें दो भागों में बाँटा गया है–कृष्ण या शुक्ल गति। इन्हें धूमयान तथा देवयान भी कहा गया है। छान्दोग्योपनिषद् में इन गतियों और जीवात्मा की विभिन्न स्थितियों का विस्तार से वर्णन किया गया है। गीताकार ने भी कहा है–

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकमश्नन्ति
दिव्यान्दिवि देवभोगान्।।
ते तं भुक्त्वा स्वर्ग लोकं विशालं।
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति।।

(गीता ९.२०–२१)

अर्थात्—वैदिक सकाम कर्मकाण्ड के द्वारा यज्ञ भगवान् की पूजा द्वारा यज्ञ शेष के सोमपान से निष्पाप बनकर श्रेष्ठ व्यक्ति स्वर्ग प्रयाण करते हैं एवं वहाँ विभिन्न प्रकार के देव भोगों को भोगते हैं। उस विशाल स्वर्गलोक में अनेकानेक भोगों को भोगने के उपरान्त जब पुण्य कर्म समाप्त हो जाता है, तो जीव पुनः इसी मृत्यु लोक में आते हैं। यहाँ यज्ञ से तात्पर्य प्राणाग्नि के स्फुरण एवं व्यक्तित्व के उदात्तीकरण से है। भजन प्रक्रिया के कर्मकाण्ड अनिवार्य तो हैं, पर प्रधान नहीं।

अध्यात्मवेत्ताओं के अनुसार सूक्ष्म दृष्टि सम्पन्न व्यक्ति पृथ्वी पर बैठे—बैठे ही समस्त लोकों व उनमें निवास कर रही सूक्ष्म आत्माओं से सम्पर्क साधने में समर्थ होते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ सूक्ष्म सत्ताएँ अन्तरिक्षीय लोकों में ही नहीं, प्रत्युत पृथ्वी पर भी निवास करती हैं। वे अपनी ओर से शरीरधारियों से सम्पर्क स्थापित करने का पूरा प्रयास करती हैं; परन्तु सूक्ष्म जगत् से अनभिज्ञ मनुष्य समुदाय के भयभीत होने से वे संकोच करती हैं, जबकि द्रष्टा साधक उनसे पूरा सहयोग लेते हुए स्वयं को नहीं; अपितु जीवधारी समुदाय को परोक्ष के वैभव से लाभान्वित कराते हैं।

थियोसाफी समुदाय का मरणोत्तर जीवन पर पूरा विश्वास है एवं उनके मतानुसार जीवात्मा का सतत विकास होता रहता है। इस कार्य में स्रष्टा की विधि व्यवस्था में सहयोग देने हेतु महान् सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं का एक संघ है, जिसका केन्द्र हिमालय के हृदय उत्तराखण्ड में है। यहाँ दुर्गम क्षेत्रों में स्थूल शरीरधारी सामान्यतया नहीं पहुँच पाते; किन्तु अपने श्रेष्ठ कर्मों के अनुसार सूक्ष्म जीवात्माएँ प्रवेश पाती रहती हैं। जब भी पृथ्वी पर कोई संकट आता है, श्रेष्ठ व्यक्तियों को सहयोग देने हेतु वे पृथ्वी पर आती हैं।

मुण्डकोपनिषद् में उल्लेख आता हैं—

"एह्येहीति तमाहुतयः सुवर्च्चसः सूर्य्यस्य रश्मिभिर्यजमानं वहन्ति प्रियां वाचमभिवदन्त्योऽर्च्चयन्त्य एष वः पुण्यः सुकृतो ब्रह्मलोकः।।"

(प्र०मु०द्वि०खं०मं०६)

अर्थात्–"यज्ञ कर्म के फल से जो दिव्यलोक के अधिकारी होते हैं, ऐसे पुण्यात्मा पुरुष को मृत्युलोक में ज्योतिष्मति आहुतियाँ "आवो–आवो" कहकर पुकारती हैं तथा सूर्य किरणों की सहायता से दिव्यलोक में जाती हैं। वहाँ मधुर वचनों से उनकी अभ्यर्थना अर्चना करती हैं। ऐसे पुण्यात्माओं की दिव्य लोकों में गति होती है।

इस प्रकार शास्त्र वचनों में परोक्ष जगत् एवं वहाँ रहने वाली अदृश्य, सूक्ष्म आत्माओं के अस्तित्व के समर्थन में तो प्रतिपादन मिलते ही हैं, पृथ्वी पर बसने वाली श्रेष्ठ आत्माओं द्वारा उनसे सम्पर्क स्थापित कर आदान–प्रदान के क्रम का प्रसंग भी प्रकाश में आता है। वैज्ञानिकों के अनुसार सूक्ष्म शरीरधारियों में एक्टोप्लाज्म नामक एक सूक्ष्म द्रव्य विद्यमान होता है, जो पदार्थ के चतुर्थ आयाम से ऊपर की स्थिति है। सम्भवतः जीवात्मा उसी का उपयोग कर भौतिक आकार ग्रहण करती है, जैसा कि अनेकानेक उदाहरणों से सिद्ध होता है। इसे "परसोनीफिकेशन" नाम दिया गया है तथा परामनोवैज्ञानिक इस पर अनुसंधान भी कर रहे हैं।

प्रसिद्ध भौतिकीविद् मार्टिन गार्डनर ने लिखा है कि 'इस संसार में नित्य हजारों व्यक्तियों के साथ ऐसी छोटी–बड़ी घटनाएँ घटती रहती हैं। इनमें से कुछ को संयोग मान भी लिया जाय, तो भी कुछ ऐसी विलक्षण होती हैं कि उन्हें मात्र संयोग नहीं कहा जा सकता।'

प्रत्यक्षवाद को ही प्रमुख मानने वाले अन्य वैज्ञानिकों के परिहास की उपेक्षा कर कतिपय परामनोवैज्ञानिकों एवं भौतिकीविदों ने ऐसी घटनाओं का संकलन कर विश्लेषण किया व पाया कि कोई अदृश्य शक्ति, जिसकी अभी तक खोज नहीं हो पायी है, ऐसे प्रसंगों का कारण बनती है; जिन्हें परोक्ष अनुदान–सहायता के रूप में देखा जाता है, लेकिन संयोग या अपवाद करार दिया जाता है।

ब्रिटेन के भौतिकशास्त्री एवं सुप्रसिद्ध गणितज्ञ एड्रियन डॉब्स ने विभिन्न परीक्षणों के उपरान्त निष्कर्ष निकाला है कि 'इस विश्वब्रह्माण्ड

में ऐसी सूक्ष्म सन्देशवाहक शक्तिधाराएँ निरन्तर प्रवाहित होती रहती हैं, जो मानवीय ज्ञानेन्द्रियों से सम्पर्क करती हैं। इन तरंगों की वेव–लेंथ लगभग एक समान होती हैं।' अपनी पुस्तक रुट्स ऑफ काइन्सीडेन्स में डॉ० डॉब्स की इन खोजों पर टिप्पणी करते हुए आर्थर कोसलर ने लिखा है कि 'इस माध्यम से ब्रह्माण्डव्यापी अदृश्य शक्तियाँ शरीरधारी मनुष्यों से सम्पर्क साधतीं, उन्हें पूर्वाभास करातीं एवं संकट के समय मनोबल बढ़ाने वाला उत्कृष्ट चिन्तन देती हैं। इन्हीं को अदृश्य सहायक की उपमा भी दी जा सकती है। सम्भवतः उच्चस्तरीय सहायक आत्माएँ सूक्ष्म जगत् का प्रत्यक्ष जगत् से सम्पर्क जोड़ने के लिए यही माध्यम अपनाती हों।'

ऐसे अनेकों उदाहरण मिलते हैं जिनमें व्यक्तियों को ऐसे अप्रत्याशित लाभ मिले, जो कि प्रयत्न करने पर सम्भवतः न मिल पाते। इन्हें दैवी अनुग्रह, भाग्य, पूर्व पुण्य अथवा वैज्ञानिकों की भाषा में संयोग कहा जाय, पर वे हैं ऐसे, जिनकी मानवी प्रयत्न पुरुषार्थ से कहीं कोई संगति नहीं बैठती। वैसी आशा–अपेक्षा भी नहीं रखी जाती, पर जब विचित्र संयोग सामने आता है, तब वह उलझन उठना स्वाभाविक है कि प्रयत्न की परिणति वाला सिद्धान्त यहाँ क्यों उलट गया?

रहस्यों से भरा परोक्षजगत्–

यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि अदृश्य जगत् के सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के साथ सम्बन्ध साधन–आदान–प्रदान का द्वार खोलने से मनुष्य का अपना दायरा और कार्यक्षेत्र बढ़ेगा। आधार रहित सम्पर्क ही डरावने परिणाम प्रस्तुत करते हैं।–अन्यथा साँप, शेर, रीछ, बन्दर तक के पालतू बनने पर दोनों पक्षों को ही उसका सत्परिणाम मिलता है। अदृश्य आत्माएँ किसी आचार संहिता के आधार पर मनुष्य जगत् के साथ सम्पर्क साधें, तो दो लोकों के बीच महत्त्वपूर्ण प्रत्यावर्तन चल पड़ेगा और मृतकों एवं जाग्रतों के बीच नाम मात्र का अन्तर रह

जाएगा। विगत के अनुभवों का लाभ उठाने से मनुष्य पुराने स्नेह सम्पर्क के जीवित रहने पर दिवंगत आत्माएँ अपने–अपने लिए एक उत्साहवर्धक आधार बनने की प्रसन्नता अनुभव करेंगे। प्राचीन काल में मृतकों और जीवितों के बीच ऐसा ही उपयोगी प्रत्यावर्तन चलता था। श्राद्ध परम्परा में इस प्रक्रिया के बीजांकुर मौजूद हैं।

दृश्य लोक कितना ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हो–अदृश्य लोक की विशिष्टता के साथ उसकी तुलना नहीं हो सकती। सम्पदा की आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता; किन्तु उत्कृष्टता का भी तो कोई मूल्य है। दृश्य जगत् का पुरुषार्थ आवश्यक होते हुए भी पर्याप्त नहीं है। एकाकी पूर्णतः तभी पूरी हो सकेगी, जब चेतनात्मक विभूतियों का उपार्जन, संचय एवं अभिवर्धन बन पड़े। वस्तुतः यह समूचा क्षेत्र आत्मिकी का है। उसे उपेक्षित नहीं किया जाना चाहिए और न ऐसी अस्त–व्यस्त स्थिति में रहने दिया जाना चाहिए, जिसमें कि वह इन दिनों पड़ी हुई है।

वास्तव में अदृश्य जगत् अपने आप में परिपूर्ण रहस्य रोमांच से भरी एक दुनिया है। वह उतनी ही विलक्षण है जितनी कि हमारी निहारिका, सौर मण्डल एवं ब्रह्माण्ड का यह पूरा दृश्य परिकर है। मनुष्य की स्वयं की अपनी दुनिया एवं समाज व्यवस्था है। उसी तरह जलचरों, सूक्ष्मजीवी, परजीवी, कृमि–कीटकों वायरस, बैक्टीरिया आदि का भी अपना एक विलक्षण जगत् है। उनकी भी अपनी रीति–नीति है एवं मनुष्य की दुनिया से सर्वथा भिन्न आवश्यकताएँ एवं कठिनाइयाँ हैं। जो दृश्यमान नहीं हैं, ऐसा अदृश्य लोक मरणोत्तर जीवनावधि में रह रहे जीवधारियों का भी है जिसके प्रमाण, उदाहरण आये दिन मिलते रहते हैं। पितर एवं अदृश्य सहायक यहीं रहते हुए निर्धारित समय व्यतीत करते हैं एवं समय आने पर समान गुणधर्मी आत्माओं से अपना सम्पर्क जोड़ कर स्नेह–सौजन्य–सहयोग का सिल–सिला चलाते हैं। पितरगण अपने श्रेष्ठ जीवनकाल की ही तरह मरणोत्तर स्थिति में भी किसी के काम

आने–सहायता पहुँचाने अथवा हितकारी परिस्थितियाँ बनाने में योगदान करना चाहते हैं। आत्मिकी का यह अध्याय रहस्यपूर्ण तो है ही अपने आप में शोध का विषय भी है।

सतत अनुग्रह बरसाने वाले सदाशय पितर–

मरण और पुनर्जन्म के बीच के समय में जो समय रहता है, उसमें जीवात्मा क्या करता है? कहाँ रहता है? आदि प्रश्नों के सम्बन्ध में भी विभिन्न प्रकार के उत्तर हैं, पर उनमें भी एक बात सही प्रतीत होती है कि उस अवधि में उसे अशरीरी; किन्तु अपना मानवी अस्तित्व बनाये हुए रहना पड़ता है। जीवन मुक्त आत्माओं की बात दूसरी है। वे नाटक की तरह जीवन का खेल खेलती हैं और अभीष्ट उद्देश्य पूरा करने के उपरान्त पुनः अपने लोक को लौट जाती हैं। इन्हें वस्तुओं, स्मृतियों, घटनाओं एवं व्यक्तियों का न तो मोह होता है और न उनकी कोई छाप इन पर रहती है। किन्तु सामान्य आत्माओं के बारे में यह बात नहीं है। वे अपनी अतृप्त कामनाओं, विछोह, संवेदनाओं, राग, द्वेष की प्रतिक्रियाओं से उद्विग्न रहती हैं। फलतः मरने से पूर्व वाले जन्मकाल की स्मृति उन पर छाई रहती है और अपनी अतृप्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने के लिए ताना–बाना बुनती रहती हैं। पूर्ण शरीर न होने से वे कुछ अधिक तो नहीं कर सकती पर सूक्ष्म शरीर से भी वे जिस–तिस को अपना परिचय देती हैं। इस स्तर की आत्माएँ भूत कहलाती हैं। वे दूसरों को डराती या दबाव देकर अपनी अतृप्त अभिलाषाएँ पूरी करने में सहायता करने के लिए बाधित करती हैं। भूतों के अनुभव प्रायः डरावने और हानिकारक ही होते हैं। पर जो आत्माएँ भिन्न प्रकृति की होती हैं, वे डराने, उपद्रव करने से विरत ही रहती हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति भवन में समय–समय पर जिन पितरों के अस्तित्व अनुभव में आते रहते हैं, उनके आधार पर यह मान्यता बन गई है कि वहाँ पिछले कई राष्ट्रपतियों की प्रेतात्माएँ डेरा डाले पड़ी हैं। इनमें अधिक बार अपने अस्तित्व का परिचय देने

वाली आत्मा अब्राहमलिंकन की है। ये आत्माएँ वहाँ रहने वालों को कभी कोई कष्ट नहीं पहुँचातीं। वस्तुतः उपद्रवी आत्माएँ तो दुष्टों की ही होती हैं।

मरण के समय में विक्षुब्ध मनःस्थिति लेकर मरने वाले अक्सर भूत–प्रेत की योनि भुगतते हैं; पर कई बार सद्भाव सम्पन्न आत्माएँ भी शान्ति और सुरक्षा के सदुद्देश्य लेकर अपने जीवन भर सम्बन्धित व्यक्तियों को सहायता देती–परिस्थितियों को सभालती तथा प्रिय वस्तुओं की सुरक्षा के लिए अपने अस्तित्व का परिचय देती रहती हैं। पितृवत् स्नेह, दुलार और सहयोग देना भर उनका कार्य होता है।

पितर ऐसी उच्च आत्मायँ होती हैं जो मरण और जन्म के बीच की अवधि को प्रेत बनकर गुजारती हैं और अपने उच्च स्वभाव संस्कार के कारण दूसरों की यथासम्भव सहायता करती रहती हैं। इनमें मनुष्यों की अपेक्षा शक्ति अधिक होती हैं। सूक्ष्म जगत् से सम्बन्ध होने के कारण उनकी जानकारियाँ भी अधिक होती हैं। उनका जिनसे सम्बन्ध हो जाता है, उन्हें कई प्रकार की सहायतायँ पहुँचाती हैं। भविष्य ज्ञान होने से वे सम्बद्ध लोगों को सतर्क भी करती हैं तथा कई प्रकार की कठिनाईयों को दूर करने एवं सफलताओं के लिए सहायता करने का भी प्रयत्न करती हैं।

ऐसी दिव्य आत्माएँ, अर्थात् पितर सदाशयी, सद्भाव–सम्पन्न और सहानुभूतिपूर्ण होती हैं। वे कुमार्गगामिता से असन्तुष्ट होतीं तथा सन्मार्ग पर चलने वालों पर प्रसन्न रहती हैं।

पितर वस्तुतः देवताओं से भिन्न; किन्तु सामान्य मनुष्य से उच्च श्रेणी की श्रेष्ठ आत्माएँ हैं। वे अशरीरी होती हैं, देहधारी से सम्पर्क करने की उनकी अपनी सीमाऐं होती हैं। हर किसी से वे सम्पर्क नहीं कर सकतीं। कोमलता और निर्भीकता, श्रद्धा और विवेक दोनों का जहाँ उचित संतुलन सामञ्जस्य हो ऐसी अनुकूल भाव–भूमि ही पितरों के सम्पर्क के अनुकूल होती है। सर्व साधारण उनकी छाया से डर सकते

हैं, जबकि डराना उनका उद्देश्य नहीं होता। इसलिए वे सर्व साधारण को अपनी उपस्थिति का आभास नहीं देतीं। वे उपयुक्त मनोभूमि एवं व्यक्तित्व देखकर ही अपनी उपस्थिति प्रकट करतीं और सत्परामर्श, सहयोग–सहायता तथा सन्मार्ग–दर्शन कराती हैं।

अवांछनीयताओं के निवारण, अनीति के निराकरण की सत्प्रेरणा पैदा करने तथा उस दिशा में आगे बढ़ने वालों की मदद करने का काम भी ये उच्चाशयी 'पितर' आत्माएँ करती हैं। अतः भूत–प्रेतों से विरक्त रहने, उनकी उपेक्षा करने और उनके अवांछित–अनुचित प्रभाव को दूर करने की जहाँ आवश्यकता है, वहीं पितरों के प्रति श्रद्धा–भाव दृढ़ रखने, उन्हें सद्भावना भरी श्रद्धांजलि देने तथा उनके प्रति अनुकूल भाव रखकर उनकी सहायता से लाभान्वित होने में पीछे नहीं रहना चाहिए।

पितरों के भी अनेक स्तर होते हैं और उसी के अनुरूप वे सहायता करते हैं। श्री सी० डब्ल्यू लेडवीटर ने अपनी पुस्तक 'इनविजिबुल हेल्पर्स' में लिखा है कि सात लोकों में से ऊपरी छः लोकों से सम्बन्धित छः तरह की प्रेतात्माएँ होती हैं और प्रत्येक स्तर के दायित्व तथा गतिविधियाँ भिन्न–भिन्न होती हैं। प्रकृति, संस्कार, योग्यता एवं अभिरुचि के अनुरूप ये पितर सहायता एवं मार्ग दर्शन का काम करते हैं।

श्री लेडवीटर ने अपनी उपरोक्त पुस्तक में विश्व के विभिन्न समुदायों में प्रचलित पितरों सम्बन्धी, धारणाओं के विवरण प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट किया है कि पुरानी यूनानी एवं रोमन सभ्यता में ये आस्थाएँ जहाँ धूमिल अस्पष्ट धारणाओं के रूप में विद्यमान हैं, वहीं ईजिप्ट–मिश्र तथा चीन की सांस्कृतिक आस्थाओं में पितरों से सम्बन्धित विस्तृत कथाओं तथा कर्मकाण्डों की विद्यमानता है। ईजिप्ट–सभ्यता के धर्म ग्रन्थों का सार–सन्दर्भ 'द बुक आफ डेड' नामक ग्रन्थ में संग्रहीत है। उसमें पितरों की गतिविधियों एवं उनके द्वारा दी जाने वाली सहायताओं के सैकड़ों मामले विस्तार से दिए गए हैं। किन्तु पितरों की गतिविधियों का निरूपण करने वाले नियम तथा प्रक्रियाएँ स्पष्ट रूप में नहीं दी गई हैं।

श्री लेडवीटर ने अपनी पुस्तक में कहा है कि हिन्दुओं में श्राद्ध की जो प्रक्रिया प्रतिष्ठित है तथा उनसे सम्बन्धित जो विवरण हैं, वे सर्वाधिक प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक हैं। किन्तु अब वे भी मात्र कर्मकाण्ड के रूप में अवशिष्ट हैं और परम्परागत रीति–रिवाज बनकर रह गये हैं। उनके पीछे सन्निहित तत्वज्ञान को अधिकांश हिन्दू भूल चुके हैं। इसलिए न तो वे स्वयं ही उस प्रक्रिया द्वारा पितरों से समुचित और पर्याप्त लाभ प्राप्त कर पाते, न ही पितरों एवं स्वर्गीय आत्माओं को ही अपनी श्रद्धा–भावना का उचित लाभ पहुँचा पाते हैं।

श्री लेडवीटर ने स्पष्ट किया है कि इन अशरीरी आत्माओं से सम्पर्क का मूल आधार संकल्प एवं विचार ही हैं। जड़ वस्तुओं और निष्प्राण कर्मकाण्डों के माध्यम से पितरों से आदान–प्रदान का क्रम नहीं चल सकता। क्योंकि वह सारा व्यापार भावनात्मक एवं विचार परक ही है। कर्मकाण्ड की प्रक्रियाएँ आवश्यक तो हैं; किन्तु वे उपकरण हैं, उनका प्रयोग होता है, वे स्वयं इन प्रयोगों के संचालन एवं परिणामों के प्रतिपादन में असमर्थ हैं, बिना ज्ञान के उपकरणों का उचित प्रयोग और सही परिणामों की प्राप्ति असम्भव है। अतः आवश्यकता पितरों की सत्ता के सही स्वरूप को समझने और उनसे सम्पर्क की पात्रता स्वयं में विकसित करने की है? वैसा हो सके, तो उनसे देव स्तर का सहयोग प्राप्त किया जाकर जीवन को अधिक समृद्ध, सार्थक एवं सफल बनाया जा सकता है।

दिव्य प्रेतात्मा से कभी–कभी किन्हीं–किन्हीं का सीधा सम्बन्ध उनके पूर्वजों के स्नेह–सद्भाव के आधार पर हो जाता है कई बार वे उपयुक्त सत्पात्रों को अनायास ही सहज उदारतावश सहायता करने लगते हैं; किन्तु ऐसा भी सम्भव है कि कोई व्यक्ति अपने आपको साधना द्वारा प्रेतात्माओं का कृपापात्र बना ले और अपने साथ अदृश्य सहायकों का अनुग्रह जोड़कर अपनी शक्ति को असामान्य बना ले एवं महत्त्वपूर्ण सफलतायें प्राप्त करने का पथ प्रशस्त करे।

पितरों के अनेक वर्ग हैं और देव–सत्ताओं की ही तरह उनके क्रिया–कलापों के क्षेत्र भी भिन्न–भिन्न हैं। प्रत्यक्ष मार्गदर्शन, गूढ़–संकेत, दिव्य प्रेरणाओं तथा आकस्मिक सहायतायें उनसे उपलब्ध होती हैं। विपत्ति से त्राण पाने, सन्मार्ग पर अग्रसर होने और मानवीयता के क्षेत्र को विस्तृत करने, सामाजिक प्रगति का पथ प्रशस्त करने में उनके दिव्य–अनुदान दैवी वरदान बनकर सामने आ सकते हैं। सूक्ष्म शक्तियों के रूप में वैसे भी वे क्रियाशील रहते ही हैं और अनीति–अत्याचार–अन्याय के क्रम को आकस्मिक अप्रत्याशित रीति से उलट देने की चमत्कारी प्रक्रिया कई बार उनके अनुग्रह से ही सम्पन्न हुआ करती है। ऐसे श्रेष्ठ पितर सचमुच श्रद्धा–भाजन हैं।

इस संदर्भ में एक नया पक्ष और भी है। वह यह है कि जीव सत्ता अपनी संकल्प शक्ति का एक स्वतन्त्र घेरा बनाकर खड़ा कर देती है और को अन्य जन्म मिलने पर भी वह संकल्प सत्ता उसका कुछ प्राणांश लेकर अपनी एक स्वतन्त्र इकाई बना लेती है और इस प्रकार बनी रहती है, मानो कोई दीर्घजीवी प्रेत ही बनकर खड़ा हो गया हो। अति प्रचण्ड संकल्प वाली ऐसी कितनी ही आत्माओं का परिचय समय–समय पर मिलता रहता है। लोग इन्हें पितर' नाम से देवस्तर की संज्ञा देकर पूजते पाए जाते हैं। वे अपने अस्तित्व का प्रमाण जब–तब इस प्रकार देते रहते हैं कि आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है। इतने पुराने समय में उत्पन्न हुई वे आत्मायें अभी तक अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं, यह प्रेत विद्या के लोगों के लिए भी अचम्भे की बात है, क्योंकि वे भी प्रेतयोनि को स्वल्पकालीन मानते हैं। अब उन्हें भी एक नये 'पितर' वर्ग को मान्यता देनी पड़ी है। जो मात्र भूत–प्रेत नहीं होते, वरन् अपनी प्रचण्ड शक्ति का दीर्घकाल तक परिचय देते रहते हैं।

हजारों वर्ष पूर्व उत्पन्न आत्मायें अभी तक प्रेतावस्था में ही हों, यह मानना असंगत और असमीचीन है? वे अभी तक निश्चय ही नये जन्म लेकर नई गतिविधियों में जुट चुकी होंगी। ऐसी स्थिति में यहीं स्पष्ट

होता है कि प्रचण्ड संकल्प–सत्ता जीवात्मा की प्राण–शक्ति का एक अंश लेकर एक नयी ही शक्तिशाली इकाई बना डालती है। यह प्राणावेग से भरपूर सत्संकल्पात्मक इकाई अपने आवेग की सामर्थ्य के अनुसार ही एक निश्चित समय तक सक्रिय रहती हैं। वह समय उस प्राण सत्ता के लिए कुछ अधिक न होते हुए भी हमारे लिए हजारों वर्षों का होने से हमें चमत्कारिक लग सकता है। संकल्प सत्ता के साक्षात् विग्रह स्वरूप ये 'पितर' इकाइयाँ अपनी सरंचना से सन्निहित तत्त्वों के अनुरूप ही गतिविधियाँ करती हैं, अन्य नहीं। अर्थात् ये कुछ सीमित प्रयोजनों में ही मददगार हो सकती हैं। प्रयोजनों के जिन ढाँचों से इन संकल्प सत्ताओं का अधिक परिचय–लगाव होता है, उनकी पूर्ति में वे विशेष सहायक सिद्ध हो सकती हैं। प्रार्थना–उपासना, ईश्वर–आराधना, सामाजिक कर्तव्य विशेष आदि में आकस्मिक सहायता के रूप में ऐसी ही पितर–सत्ताओं का अनायास अनुग्रह बरसा करता है।

पितर लोक की निराली झाँकी–

वाशिंगटन के किसी चर्च में श्रीयुत् रेवरेन्ड आर्थर फोर्ड का भाषण था। मृतात्माओं को बुलाने और उनका जीवित मनुष्यों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में फोर्ड की उन दिनों अमेरिका में वैसी ही ख्याति थी जिस तरह भारतवर्ष में अहमद नगर के श्री बी०डी० ऋषि और उनकी धर्मपत्नी की चर्चा रही है। श्रीमती रूथ मान्टगुमरी ने फोर्ड के बारे में अनेक बातें सुनी थीं, वह स्वयं अमेरिका की प्रख्यात महिला थीं और जॉन डिक्सन के सम्पर्क में आने के बाद से आत्मा, मृत्यु, परलोक, पुनर्जन्म आदि पर विस्तृत खोज कर रही थीं। एक दिन एक लाइब्रेरी में उन्होंने श्रीशेरवुड एडी की प्रसिद्ध पुस्तक 'आप मृत्यु के बाद भी जीवित रहेंगे' (यू विल सरवाइव आफ्टर डेथ) पढ़ी। उसमें फोर्ड की उपलब्धियों की विस्तृत चर्चा थी। श्री एडी इस विषय पर विश्व विख्यात लेखक माने जाते हैं। पूर्व में वाइ० एम०सी०ए० के संस्थापक भी वही थे,

इसीलिए श्रीमती रूथ मान्टगुमरी ने निश्चय किया कि अब एडी ने भी फोर्ड की उपलब्धियों को सत्य और प्रामाणिक माना है, तो उनसे मिलकर निःसन्देह अनेक तथ्यों का पता लगाया जा सकता है। तभी से वे इस प्रयत्न में थीं कि कहीं फोर्ड से भेंट की जाये। सौभाग्य ही था कि आज फोर्ड स्वयं किसी आध्यात्मिक भाषण के सम्बन्ध में वाशिंगटन पधारे थे। श्रीमती रूथ मान्टगुमरी ने अवसर खोना ठीक न समझा। वे फोर्ड से मिलीं और विस्तृत विचार–विमर्श के लिए समय की माँग की। फोर्ड ने दो दिन बाद आने की स्वीकृति दे दी।

दो दिन बाद श्रीमती रूथ मान्टगुमरी फोर्ड से नियत स्थान पर फिर मिलीं और उनसे पूछा–क्या यह निश्चित है कि मृत्यु के बाद जीवन का अन्त नहीं हो जाता, वरन् आत्मायें अपनी गतिविधियाँ और क्रिया–कलाप उसी प्रकार जारी रखती हैं, जिस तरह जीवित मनुष्य?

फोर्ड ने उतर दिया–"मृत्यु के पश्चात् भी आत्माएँ दूसरे लोकों में जाकर बराबर आध्यात्मिक उन्नति के प्रयत्न में रहती हैं, जब तक मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती तब तक उनका यह प्रयत्न बराबर चलता रहता है। आध्यात्मिक उन्नति के लिँए यह आत्माएँ दूसरे लोंगों, विशेष कर अपने प्रियजनों को भी सन्देश पहुँचाना चाहती हैं, पर उन सूक्ष्म संकेतों को सब लोग नहीं पकड़ पाते, इसलिए उनके सन्देश निरर्थक जाते रहते हैं, पर कई आत्मायें इतनी बलवान होती हैं कि वे अपनी बात किसी माध्यम से व्यक्त और लिख भी सकती हैं।

श्रीमती रूथ इतनी आसानी से वह बातें मान लेने वाली नहीं थीं। प्रत्येक मनुष्य के जीवन में ऐसी जिज्ञासाएँ उठती हैं, किन्तु चिन्तन के अभाव में, विश्लेषण अथवा प्रमाणों के अभाव में वह रहस्य मुँदे के मुँदे रह जाते हैं। एक बार बालक नचिकेता को भी ऐसी ही प्रबल जिज्ञासा उठी थी, उसने भी यमाचार्य से ऐसा ही प्रश्न किया था–

ये यं प्रेते विचिकित्सा मनुष्ये ऽस्तीत्येके नायमस्तीति चैके।
एतद्विद्यामनुशिष्टस्त्वयाहं वराणामेष वरस्तृतीयः।।

––कठ० उप० १.१.२०

"आचार्य देव ! मरे हुए मनुष्य के विषय में बड़ा भ्रम है। कुछ लोग कहते हैं, मृत्यु हो जाने पर भी जीव बना रहता है। कुछ कहते हैं, उसका नाश हो जाता है। सो आप मुझे उसका निश्चित निर्णय करके बताइये सत्य क्या है?"

यमाचार्य ने नचिकेता को तब योगाभ्यास कराया और उसके द्वारा उसने यह जाना कि जीव किस प्रकार मृत्यु के उपरान्त यमलोक, प्रेतलोक, वृक्ष, वनस्पति आदि योनियों, भुवःलोक आदि में जाता है और वहाँ की परिस्थितियों का वर्तमान की तरह उपयोग करता है।

अपनी बात फोर्ड ने समाप्त की तो श्रीमती रूथ मान्टगुमरी ने उनसे पूछा—क्या आप ऐसी आत्मा को बुलाकर मुझसे परिचय करा सकते हैं, जिसे मैं पहले से जानती हूँ, जिससे मैं सत्य और असत्य का पता लगा सकूँ ?

फोर्ड एक सोफे पर आराम से बैठ गये । दोनों आँखें एक काले रुमाल से बाँध ली। रूथ ने पूछा, क्या बत्ती बुझा देनी चाहिए, पर फोर्ड ने कहा—उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। थोड़ी देर बाद एक आवाज आने लगी, यह आवाज यद्यपि फोर्ड के मुख से ही आ रही थी, पर उनकी आवाज से बिल्कुल भिन्न। उसने बताया यह लो श्रीमती रूथ तुम्हारे चाचा तुमसे भेंट करना चाहते हैं। इनका नाम फ्रेनड बैनेट है। वह बहुत समय पहले अमरीका में पादरी (प्रीचर) थे।"

श्रीमती रूथ तुरन्त बोलीं—"नहीं, नहीं यह गलत है, मेरे इस नाम के कोई चाचा नहीं थे, न ही इस नाम के किसी व्यक्ति को मैं जानती हूँ।" इसके बाद माध्यम (फोर्ड) ने फिर बोलना आरम्भ किया— वह भी तुम्हें नहीं जानते, पर उनका कहना है कि तुम्हारे पति उन्हें खूब अच्छी तरह जानते हैं, तुम्हारे पति का नाम 'बाब' है, तुम उनसे घर जाकर पूछना और हाँ अब लो यह तुम्हारे पिताजी उपस्थित हैं। वे अपना नाम विलियम टॉस बता रहे हैं। श्रीमती रूथ यह सुनते ही चौंकी—वस्तुतः उनके पिता का यही नाम था।

माध्यम ने आगे बोलना आरम्भ किया—'श्रीम्ती रूथ—आपके पिता आपको और आपकी माता जी को प्यार कहते हैं, वे बताते हैं कि जब उनकी मृत्यु हुई थी, तब तुम उनके पास नहीं थी। वे काफी बीमार थे और उनकी एकाएक मृत्यु हो गई थी। मर कर थोड़ी देर में उन्हें अपने रोग का भी पता नहीं रहा। वे स्वस्थ अनुभव कर रहे हैं वे कह रहे हैं—'यहाँ किसी प्रकार की बीमारी नहीं हैं, मनुष्य हमेशा एक—सी अवस्था में रहता है। न वह बूढ़ा होता है, न बालक और न युवक, और हाँ देखो तुम्हारी माताजी यहाँ नहीं हैं, वे तुमसे काफी दूर हैं अभी कुछ दिन तक आएँगी भी नहीं, उन्हें मैं देख रहा हूँ, उनकी टाँग में कई दिन से दर्द हो रहा है।"

उक्त दोनों व्यक्तियों के अतिरिक्त कई और जानी, अनजानी आत्माओं का परिचय श्रीमती रूथ से कराया गया। अपनी पुस्तक 'सत्य की खोज में' वे स्वयं लिखती हैं "कई पहचानी हुई आत्माओं की बातें इतनी सत्य थीं कि मैं आश्चर्य—चकित रह गई। मेरे पिताजी ने जो—जो बातें बताई सब सच थीं। सचमुच ही जब वे बीमार थे तब मैं अखबार के काम से इजिप्ट गई थी। मुझे इजिप्ट में ही तार द्वारा उनके निधन की सूचना दी गई थी। जब मैं लौट कर आई तब दो दिन बीत चुके थे। पिताजी किसी बीमारी से ही मरे थे, यह भी मुझे अच्छी तरह मालूम है।"

"सायंकाल मैंने एकाएक माताजी को टेलीफोन किया तो उन्होंने बताया कि सचमुच उनके एक पैर में कई दिन से बुरी तरह से कष्ट है और उन्हें लौटने में काफी समय लगेगा। इसी प्रकार बॉब ने मुझे बताया कि मेरी मौसी फ्रेंड बैनेट नाम के एक पादरी को ब्याही थी। वे काँगो (प० अफ्रीका) में ही रहते थे।"

इन दोनों घटनाओं में श्रीमती रूथ ने जहाँ वर्तमान के सत्यों को स्वीकार किया है, वहाँ यह भी लिखा है कि यदि मृतात्माओं द्वारा बताई हुई भूत व वर्तमान की बातें सच होती हैं, तो वे मृत्यु के अनन्तर अपने अस्तित्व के बारे में भी जो कुछ कहते हैं उसे सत्य मानने से इनकार

करना दुराग्रह ही होगा। उसे सत्य न मानकर मानव–समाज अपना अहित ही करता है; क्योंकि उससे एक अत्यन्त आवश्यक और उपयोगी वास्तविकता पर पर्दा पड़ जाता है।"

'माध्यम' के द्वारा मेरे पिता ने कहा था– "मैं एक ऐसे रहस्य का उद्‌घाटन करता हूँ, जो विश्व की सबसे बड़ी आवश्यकता है, वह यह कि हम एक ऐसे संसार में रह रहे हैं, जिसमें स्थूल की तरह सब कुछ दृश्य है, सब कुछ अनुभव गम्य है, जहाँ बराबर उन्नति होती रहती है। हम शून्य में नहीं रह रहे। यहाँ सबको मनोरंजन के साधन उपलब्ध हैं। यहाँ बेकार बैठकर कोई प्रसन्न नहीं रह सकता, जितना शरीर से काम कर सकता था, उससे अधिक काम मैं अब भी कर सकता हूँ। तुम जानती होगी मुझे गाने का शौक था, मैं अभी भी संगीत का अभ्यास करता हूँ।"

यह बातें सुनने वाले को अटपटी अवश्य लगती हैं, किन्तु देर तक अध्ययन और खोज करने के पश्चात् मुझे इनकी सत्यता में अविश्वास नहीं रह जाता। यह तथ्य स्वयं श्रीमती रूथ मान्टगुमरी ने स्वीकार किया है और उसके साथ अमेरिका की उस जबर्दस्त घटना को जोड़ा है जिसके बारे में वहाँ बहुत दिन तक व्यापक हलचल मची रहीं।

एक बार जिस समय श्रीमती रूथ का मृतात्माओं से परिचय कराया जा रहा था, माध्यम (फोर्ड जो मृतात्माओं को बुलाकर उनसे संकेत प्राप्त करके रूथ को बताता था) ने बताया– 'आपसे कोई जज बात करना चाहते हैं। वह लैपटे शहर में आपके घर के समीप ही रहते थे, एक दिन अचानक कहीं गायब हो गये बाद में डूब जाने से उनकी मृत्यु हुई थी, उनका सड़ा हुआ ढाँचा अब भी वहाँ पड़ा देखा जा सकता है।'

श्रीमती रूथ ने वहाँ तो यही कहा कि मुझे ऐसे किसी पड़ौसी का पता नहीं है; किन्तु घर आकर उन्होंने लैपटे कूरियर जनरल के सम्पादक से टेलीफोन पर पूछा तो उसने बताया– हाँ, हाँ ! आपके मकान के पास पार्किन्सन नामक एक सज्जन अवश्य रहते थे। वे

'यूनाइटेड कोर्ट आफ अपील्स' में जज थे। वे एक बार एकाएक गायब हो गये। सात राज्यों के सम्मिलित प्रयत्नों के बाद भी उनका कहीं पता न चला। लेक शोर होटल के समीप मिशगन झील के किनारे उनका एक हैट और छाता अवश्य मिला था; पर उनके डूबकर मर जाने का कोई प्रमाण न मिलने के कारण उनके स्थान पर किसी परमानेण्ट जज की नियुक्ति नहीं की गयी थी। उनका वेतन उनके बैंक खाते में जमा किया जाता रहा है।'

सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि थोड़े दिन बाद ही उनका सड़ा हुआ ढाँचा पानी में तैरता हुआ पाया गया। इन घटनाओं से इस बात की पुष्टि होती है कि जीवात्मा नहीं, शरीर मरता जीता है और मृत्यु के बाद भी जीवन का विकास–क्रम बन्द नहीं होता। गीता में भगवान् कृष्ण ने भी कई स्थानों पर दुहराया है। उन्होंने आत्मा को कभी नष्ट न होने वाली बताया व अर्जुन को बार–बार कहा है कि शक्ति के सत्संस्कार सम्पन्न होने पर यही अक्षय आत्मा उसकी मरणोपरांत अवधि में 'पितर' रूप में क्रियाशील रहती है तथा अपनी आत्मोन्नति के लिए प्रयासरत रहने के साथ ही इस पृथ्वी के प्रति रागात्मक सम्पृक्ति रखने के कारण यहाँ भी स्वजनों या सत्पात्रों की आत्मोन्नति में मदद करने को सदैव प्रस्तुत रहती हैं। उनके पितरों से सम्पर्क करने पर व्यक्ति को लाभ ही लाभ होता है, हानि कुछ नहीं होती।



सहयोग—सहकार भरी दिव्य आत्माएँ

मनुष्यों में सभी का स्वभाव एक जैसा नहीं होता। कोई उपकारी प्रकृति का होता है और कोई कष्ट पीड़ितों की, दुःखीजनों की सेवा सहायता बिना प्रत्युपकार की भावना से करता है। जहाँ इस तरह की परोपकारी वृत्ति के लोगों का बाहुल्य है, वहाँ दुष्ट प्रकृति के लोगों की संख्या भी कम नहीं है, जिन्हें दूसरों को अकारण कष्ट पहुँचाने में मजा आता है। दूसरों को दुःख पहुँचाकर, प्रसन्न होने वाले लोग परपीड़क कहे जाते हैं। इस प्रकार की प्रकृति के लोग मरने के बाद भूत, पिशाच स्तर के बनते हैं और वे उस योनि में रहकर भी दूसरों को दुःख पहुँचाया करते हैं।

अदृश्य जगत् की सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं से किसी को भय नहीं होना चाहिए। जीवित या दिवंगत दोनों ही प्रकार की आत्माओं के पारस्परिक सम्पर्क का अनुभव न होने से जीवधारियों का कभी—कभी आतंकित होना स्वाभाविक है। लेकिन यह एक ऐसा प्रकरण है जिसे आत्मिकी के आधार पर सुनियोजित रूप से अधिक अच्छी तरह—अधिक व्यापक एवं योजनाबद्ध प्रयोजनों के लिए खोला जा सकता है। यदि अदृश्य आत्माएँ किसी सुनिर्धारित आचार संहिता के आधार पर मानव जगत् के साथ सम्पर्क साधें, तो दो लोकों के बीच महत्त्वपूर्ण आदान—प्रदान चल सकता है। मृतकों व जीवितों के बीच पुरातन काल में भी ऐसा ही परस्पर उपयोगी प्रत्यावर्त्तन चलता था। आज भी ऐसे अनेकों उदाहरण मिलते हैं, जिनसे पितरों के अदृश्य सहायक के रूप में सहयोगी होने के सिद्धान्त की पुष्टि होती है। इनसे कम से कम उन भ्रान्तियों को मिटा सकने में तो मदद मिलती ही है, जो जन मानस में बुरी तरह संव्याप्त हैं।

बहुधा भूत–प्रेतों द्वारा डराने, कष्ट पहुँचाने की अनेकों घटनाएँ आये दिन प्रकाश में आती रहती हैं। डरावनी या घिनौनी प्रकृति के भूत–प्रेतों का अस्तित्व जहाँ एक तथ्य है, वहीं यह भी सत्य है कि अशरीरी आत्माएँ मनुष्यों का कल्याण करने, उनका सहयोग करने में भी निरत रहती हैं। इस तरह की अशरीरी आत्माओं का अस्तित्व भी है। साधारणतया उच्च आत्माएँ मनुष्यों की सहायता ही करती हैं और अपनी सदाशयी वृत्ति के कारण दूसरों को आगे बढ़ाने तथा खतरों से बचाने के लिए पूर्व संकेत भी करती हैं। जिस प्रकार उदार व्यक्ति अकारण दूसरों की सेवा सहायता करने के लिए तैयार रहते हैं, वैसे ही सूक्ष्म शरीरधारी आत्माएँ लोगों को उपयोगी ज्ञान देने अथवा आत्मा का अस्तित्व, शरीर न रहने पर भी बना रहता है, यह विश्वास दिलाने के लिए कुछ व्यवहारिक और उपयोगी सहयोग देती रहती हैं।

दृश्य एवं अदृश्य जगत् के मध्य सम्पर्क एवं आदान–प्रदान के ऐसे कई प्रसंग कई विख्यात विभूतियों से जुड़े हुए हैं, जिससे उनके विवादास्पद होने की गुंजाइश रह ही नहीं जाती। इन सभी से यह स्पष्ट होता है कि इन व्यक्तियों को देव स्तर की आत्माओं ने अनुदान दिए एवं इनने सहयोग प्राप्त कर उनसे लाभ उठाया।

महर्षि अरविन्द के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है कि वे जब अलीपुर जेल में थे, तब दो सप्ताह तक लगातार विवेकानन्द की आत्मा ने उनसे सम्पर्क किया था। स्वयं अरविन्द ने लिखा है "जेल में मुझे दो सप्ताह तक कई बार विवेकानन्द की आत्मा उद्बोधित करती रही है और मुझे उनकी उपस्थिति का भान होता रहा। उस उद्बोधन से मुझे आध्यात्मिक अनुभूति हुई। भावी साधनाक्रम हेतु महत्त्वपूर्ण निर्देश भी मिले।"

सन् १६०१ में जब अरविन्द प्रेतात्माओं के सम्पर्क का अभ्यास किया करते थे, इस अभ्यास में एक बार रामकृष्ण परमहंस की आत्मा ने भी अरविन्द को समष्टि की साधना हेतु कुछ महत्वपूर्ण निर्देश दिये

थे। अरविन्द जिन दिनों बड़ौदा में रहे थे, उन दिनों का एक अनुभव बताते हुए उन्होंने लिखा है कि एक बार जब वे कैम्प रोड की ओर जा रहे थे, तब एक दुर्घटना से किसी ज्योति पुरुष ने उन्हें बचाया।

श्री अरविन्द के जीवन चरित्र के श्री माँ प्रकरण में इस प्रकार की घटनाओं का विवरण देते हुए लिखा गया है, 'वे (श्री माँ) जब छोटी सी बालिका थीं, तब उन्हें बराबर भान होता रहता था कि उनके पीछे कोई अति मानवी शक्ति है, जो जब तब उनके शरीर में प्रवेश कर जाती है, तब वे बड़े–बड़े अलौकिक कार्य किया करती हैं। इस प्रकरण में उस दिव्य शक्ति द्वारा श्री माँ के कई काम आश्चर्यजनक ढंग से सम्पन्न करने की घटनाएँ वर्णित हैं। पाण्डिचेरी आकर रहने व योगीराज से सम्पर्क स्थापित करने का निर्देश भी उन्हें एक अदृश्य ज्योति सत्ता से मिला था।

प्लेटो, जेनोफेन, प्लुटार्क आदि विद्वानों ने महान् दार्शनिक सुकरात के जीवन की प्रामाणिक घटनाओं पर प्रकाश डाला है तथा उन सभी ने स्वीकार किया है कि सुकरात ने अनेकों बार यह कहा कि मेरे अन्दर एक रहस्यमय देवता 'डेमन' निवास करता है और वह समय–समय पर मुझे पूर्व सूचनाएँ दिया करता है। इस तथ्य की यथार्थता के अनेक प्रमाण उद्धरण भी उपरोक्त लेखकों ने प्रस्तुत किए हैं। प्लुटार्क ने अपनी पुस्तक 'दी जेनियो सौक्रिटिस' में एक ऐसी ही घटना का उल्लेख किया है। एक बार सुकरात अपने कई मित्रों के साथ एक रास्ते पर जा रहे थे, सहसा वे रुक गये और कहा हमें इस रास्ते से नहीं चलना चाहिए, खतरा है। कइयों ने उनकी बात मान ली और वह रास्ता छोड़ दिया, पर कई इस साफ सुथरे रास्ते को छोड़ने के लिए तैयार न हुए। वे सुकरात की सनक को बेकार सिद्ध करना चाहते थे। जो लोग उनकी उपेक्षा कर दूसरे रास्ते से चल पड़े, वे कुछ ही दूर गए होंगे, कि जंगली सुअरों का झुंड कहीं से आ धमका और उनमें से कइयों को बुरी तरह घायल कर दिया।

प्लेटो ने अपनी पुस्तक 'थ्रीविज' में भी सुकरात से सम्बन्धित एक प्रसङ्ग दिया है, जिसमें लिखा है "एक दिन तिमार्कस नामक युवक सुकरात के पास आया। कुछ खाया पिया, बातचीत की और जब चलने लगा तो सुकरात ने उसे रोते हुए कहा जाओ मत। तुम्हारे ऊपर खतरा मँडरा रहा है। तीन बार उसने जाने की चेष्टा की पर तीनों बार उसे पकड़ कर बलपूर्वक रोक लिया। पीछे वह माना ही नहीं और हाथ छुड़ाकर चला गया। उसी शाम उसका एक अनजान व्यक्ति से झगड़ा हो गया और उसने उस आदमी का खून कर डाला। इस हत्या के अपराध में उसे फाँसी पर चढ़ाया गया।

ऐसी अन्य कितनी ही घटनाएँ हैं जिनमें सुकरात के सहचर देवता –'डेमन' द्वारा पूर्वाभास दिए जाने तथा सहायता करने के प्रमाण मिलते हैं। सुकरात पर जब मुकदमा चला और प्राण दण्ड मिला, तब उसके पास ऐसे अनेकों प्रमाण और साधन थे, जिनसे उनका बचाव हो सकता था। सफाई प्रस्तुत किए जाने योग्य मजबूत प्रमाण उसके पास थे। ऐथेन्स की जेल से उसे उसके मित्र और शिष्य भगा ले जाने के लिए पूरी तैयारी कर चुके थे, पर उनने इन सबसे सर्वथा इन्कार कर दिया और बचाव के प्रयत्नों में कोई सहयोग नहीं लिया। भरे न्यायालय में उनने स्वीकार किया, अभी–अभी मेरा देवता 'डेमन' मेरे कानों में कह कर गया है कि मृत्यु दण्ड मिलेगा, उससे डरने की कोई बात नहीं है। ऐसी मृत्यु मनुष्य के लिए श्रेयस्कर ही होती है।

मनुष्य इसी लोक, इस शरीर को सब कुछ मान बैठता है और तात्कालिक सुखोपभोग के लिए दूरवर्ती भविष्य को अन्धकारमय बनाने में लगा रहता है। इसका एक कारण परलोक सम्बन्धी मरणोत्तर जीवन सम्बन्धी अज्ञान भी है। यदि गहराई से और गम्भीरता से कुछ विचार किया जाय कि मरने के बाद भी शरीर बना रहेगा और उस स्थिति में उसके शुभ–अशुभ विचार एवं कार्य ही सुख–दुःख देने के आधार होंगे, तो निस्संदेह मनुष्य के पैर कुमार्ग पर चलने से रुकें और सन्मार्ग पर

चलने का उत्साह बढ़े। परलोक सम्बन्धी ज्ञान एवं विश्वास के प्रभाव से मनुष्य के दृष्टिकोण एवं आचरण को परिष्कृत बनने में सहायता मिलती है। इस दृष्टि से अशरीरी आत्माएँ अक्सर लोगों को अपना परिचय देती रहती हैं, साथ ही समय–समय पर उनकी ऐसी सहायता भी करती रहती हैं, जिससे परोक्ष जीवन के प्रति सर्वसाधारण की निष्ठा का विकास हो सके।

प्रसिद्ध फिल्म अभिनेता रोमान नेवारी एक बार एक होटल में ठहरा हुआ था। होटल के मालिक को मरे हुए थोड़े ही दिन हुए थे। उसके लड़कों में सम्पत्ति के बँटवारे को लेकर बहुत ही झगड़ा चल रहा था। बाप ने मरने से पहले जो वसीयत लिखी थी, इससे गुत्थी और उलझ गयी। नेवारी ने भी यह सारा वृत्तान्त सुना पर बेचारा आखिर कर क्या सकता था? परदेशी जो ठहरा। फिर भी उसकी हार्दिक इच्छा थी कि इतना बढ़िया और प्रसिद्ध होटल इन लड़कों के झगड़े में नष्ट न हो जाय, इसके लिए वह कुछ करे।

किस प्रकार झगड़ा सुलझे? यह विचार करते हुए ही नेवारी उस रात सो गया। नेवारी ने उसी रात सपना देखा कि एक वृद्ध व्यक्ति बार–बार उसके कमरे में आकर आलमारी को लाठी से ठोकता है। एक बार तो उसने चूहा समझा, पर बार–बार वही सपना, वही आवाज ! वह उठा और उसने होटल की उस आलमारी को खोला। उलट–पुलट कर देखा तो उसी में वह वसीयत रखी हुई थी, जिसके न मिलने पर दोनों भाई झगड़ रहे थे। दूसरे दिन नेवारी ने वह वसीयत उन्हें सौंपी और आसानी से झगड़ा निपट गया।

फ्रांस के सम्राट् हेनरी चतुर्थ की हत्या के कुछ समय पूर्व एक अदृश्य आत्मा ने उससे स्वप्न में आकर कहा था कि अब तुम्हारा अन्त समय निकट आ पहुँचा है। यह बात सम्राट् ने दरबारियों को बताई तो उनने इतना ही कहा कि यह निरर्थक है। उन दिनों ऐसी कोई आशंका थी भी नहीं, पर जब सचमुच कुछ समय बाद हेनरी की हत्या हो गयी तो उस पूर्वाभास को सभी ने सही बताया।

स्काटलैंड का राजा जेम्स चतुर्थ अक्सर इंग्लैण्ड पर आक्रमण कर बैठता था। अन्तिम आक्रमण के बाद उसे एक अदृश्य आत्मा दिखाई पड़ी, उसने कहा यदि भविष्य में तुमने कोई और आक्रमण किया, तो याद रखना तुम्हारी जान की खैर नहीं। राजा ने उस चेतावनी पर कोई ध्यान नहीं दिया, यों ही उसकी उपेक्षा कर दी और सचमुच जब उसने अगला आक्रमण किया तो युद्ध स्थल में ही उसकी मृत्यु हो गयी।

प्रेतबाधा और भूतबाधा होने पर कई तान्त्रिक उनका निवारण उदार सदाशय आत्माओं की सहायता से करने में सिद्धहस्त होते हैं। यद्यपि इस तरह की घटनाओं में से अधिकांश का कारण मानसिक होता है। लोग छोटी–मोटी शारीरिक परेशानियों को भी कई बार प्रेतबाधा मान लेते हैं और जान लेवाओं की शरण में जाकर अपने को ठगाते रहते हैं। लेकिन प्रेतबाधा जैसी कोई चीज होती ही नहीं है, एक दम से यह कहा भी नहीं जा सकता।

किस तरह की परेशानी प्रेतबाधा है और किस तरह की कठिनाई शारीरिक है? इसका कोई स्पष्ट वर्ग विभाजन नहीं किया जा सकता। इस विवादास्पद विषय को यहीं छोड़ देना चाहिए, लेकिन प्रसंगवश यह चर्चा अनुचित न होगी कि कुछ लोग कठिन शारीरिक रोगों का निवारण भी उदार आत्माओं के सहयोग से करने में सिद्धहस्त होते हैं। प्रख्यात लेखिका मेरी कार्डिगटन ने अपनी पुस्तक "इन सर्च आफ हीलिंग पावर" में इस तरह के कई अफ्रीकी तांत्रिकों का विवरण लिखा है, जो आत्माओं की सहायता से टूटी हड्डियाँ जोड़ देते हैं, तांत्रिकों द्वारा प्रयुक्त मारक प्रयोगों को निष्प्रभावी कर देते हैं।

"वर्ल्ड ऑफ पेराडाइज" पुस्तक के लेखक ने अफ्रीका के सहारा क्षेत्र में रहने वाली जन–जातियों के बारे में लिखा है, (जो बाद में हवाई द्वीप में जाकर रहने लगीं) कि ये लोग कुछ सदाशयी आत्माओं को प्रसन्न कर लेते हैं और उनसे रोगियों को चंगा करने का काम लेते हैं। उस क्षेत्र में रहने वाले तांत्रिकों को काहुन कहा जाता है। ये तांत्रिक

कई बार अपने वश में की गई दुष्ट आत्माओं से दूसरे व्यक्तियों पर मारक प्रयोग भी करते हैं। दूसरे तांत्रिक किसी सदाशयी और शक्तिशाली आत्माओं के द्वारा उन आत्माओं को परास्त कर देते हैं।

अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन को प्रेतात्माओं पर इतना विश्वास था कि वे अक्सर एक प्रेत विद्या विशारद कुमारी नैटिकोलन वर्ग को ह्वाइट हाउस में बुलाया करते थे और उसके माध्यम से प्रेतात्माओं से सम्पर्क कर महत्त्वपूर्ण निर्णय लेते थे। गृह युद्ध के दिनों में तो प्रेतात्मायें उनकी विश्वस्त हो गयी थीं, उनकी मदद से लिंकन को उपद्रवियों के ऐसे–ऐसे रहस्यों का पता लगा; जिन्हें जासूसी विभाग द्वारा प्राप्त करना सम्भव नहीं था। यह तो एक सुविदित तथ्य है ही कि अपने जीवन के दुःखद अन्त को उन्होंने अपने प्रेतरूप के गोली मारे जाने के रूप में स्वप्न में देखा था। राष्ट्रपति का शासकीय निवास गृह ह्वाइट हाउस ऐसी सन्देश देने वाली प्रेतात्माओं की कथाओं से अभी जुड़ा हुआ है।

थियोसोफिकल सोसाइटी की जन्मदात्री मैडम ब्लैवटस्की को चार वर्ष की आयु में ही देवात्माओं का सहयोग सान्निध्य प्राप्त होने लगा था। वे अचानक आवेश में आकर ऐसी तथ्यपूर्ण बातें बताया करती थी, जिन्हें कह पाना किसी विशेषज्ञ के लिए ही सम्भव था। मैडम ब्लैवटस्की के कथनानुसार उनके अदृश्य सहयोगियों की एक पूरी मण्डली थी, जिनमें सात प्रेत थे। ये समय–समय पर उन्हें उपयोगी परामर्श दिया करते और सहायता करते थे। उनके बचपन से ही ये प्रसंग उनके साथ ऐसे जुड़ गए थे कि उन्हें 'ऑकल्ट' का पर्यायवाची ही समझा जाने लगा था।

एक बार जब वह सोयी हुई थी तो एक प्रेतात्मा ने उसके शरीर के कपड़े ही मजाक में बिस्तर के साथ सिल दिए। बाद में जब वह सिलाई उधेड़ी गयी तब ही वह उठ सकीं। एक अवसर पर उनके सहयोगी कर्नल हैनरी ऑल्काट उनसे मिलने आये तब ब्लैवटस्की

मशीन से तौलिये सिल रही थीं और रह–रहकर धरती पर पैर पटकती जाती। आल्काट को उनकी यह क्रिया कुछ विचित्र सी लगी। उसने इसका कारण पूछा तो ब्लैवटस्की ने बताया कि एक छोटी प्रेतात्मा बार–बार मेरे कपड़े खींचती है और कहती है कि मुझे भी कुछ काम दे दो। कर्नल ने उसी मजाक में उत्तर दिया उसे कपड़े सिलने का काम क्यों नहीं दे देतीं। इसके बाद उनने कपड़े समेट कर आलमारी में रख दिये और कर्नल से बात–चीत करने में दत्त–चित्त हो गई। वार्तालाप की समाप्ति पर जब आलमारी खोली गयी तो सभी कपड़े सिले मिले। कर्नल आल्काट ने अपने अनुभवों में से ऐसे कई प्रसंग उद्‌धृत किए हैं।

सर ओलीवर लॉज ब्रिटेन के ख्याति प्राप्त वैज्ञानिकों में से एक थे। उन्हें कई विश्वविद्यालयों से अनेकों डिग्रियाँ मिली थीं और स्वर्ण पदक भी प्राप्त था। उन्होंने विज्ञान के लिए आत्मा के अस्तित्व को एक आवश्यक अन्वेषक पक्ष माना था और स्वयं आगे बढ़कर इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया। इसके लिए उनने "साइकिक रिसर्च सोसायटी" की स्थापना की और आत्मा व मरणोत्तर जीवन के सम्बन्ध में विशद् खोजकर उनकी यथार्थता स्वीकारने की स्थिति में पहुँचे थे, साथ ही अनेक प्रेतात्माओं से सम्बन्ध स्थापित कर मरणोत्तर संसार से सम्बद्ध अनेक नयी बातों का पता लगाया। इन मृतात्माओं में उनका प्रिय पुत्र रेमण्ड भी सम्मिलित था जिसकी प्रथम विश्व युद्ध के दौरान मृत्यु हो गयी थी।

'डा० ओलीवर लाज ने एक पुस्तक में इंग्लैण्ड के राज परिवार में अशरीरी प्रेतात्माओं के अस्तित्व पर प्रकाश डाला है, जो समय–समय पर राज घराने के सदस्यों को सहयोग करती थी। जार्ज पंचम के समय उनकी बड़ी बहिन लुईस शादी के कुछ ही दिनों बाद विधवा हो गयीं। लुई को अपनी पति "ड्यूक ऑफ क्लिक" से गहरी आसक्ति थी। दिवंगत आत्मा ने मरणोपरान्त भी लुईस से सम्बन्ध बनाये रखा। एलिजावेथ गोर्डन ने स्वयं कितनी बार लुईस और प्रेतात्मा ड्यूक की

वार्ता सुनी। 'सम्राट एडवर्ड सप्तम' की पत्नी महारानी एलेक्जेण्ड्रा को प्रेतों के अस्तित्व पर पूर्ण विश्वास था। वे प्रतात्माओं का मन्त्रों द्वारा आह्वान भी करती थी। एक साधारण–सी बीमारी में सम्राट दिवंगत हो गये, पर महारानी का सम्पर्क पति से मरने के बाद भी बना रहा। महारानी विक्टोरिया के विषय में भी ऐसा ही उल्लेख मिलता है कि एक प्रेत विद्या विशेषज्ञ के माध्यम से उनका सम्बन्ध अपने पति से मरणोपरान्त भी जुड़ा रहा।

अशरीरी आत्माओं के किसी माध्यम से कहे गए सन्देश की अवहेलना अन्ततः हानिकारक ही सिद्ध होती हैं। एक पादरी जेरेन्सी टेलर घोड़े पर सवार होकर बेलफास्ट से गेटो जा रहे थे। रास्ते में अचानक कोई अपरिचित व्यक्ति घोड़े के पीछे बैठ गया। पूछने पर उसने अपना नाम 'हैडकजेम्स' बताया तथा अपना पूरा परिचय देते हुए कहा कि "मैं प्रेतयोनि में हूँ। मेरी जीवित पत्नी को कृपया यह सन्देश पहुँचा दें कि उसका नया पति शीघ्र ही उसकी हत्या करवा देगा।" पादरी ने निर्दिष्ट पते पर सन्देश पहुँचा दिया; किन्तु पत्नी को विश्वास नहीं हुआ। निश्चित समय पर उसके दूसरे पति द्वारा उसकी हत्या कर दी गयी।

सरलॉज द्वारा स्थापित साइकिक रिसर्च सोसायटी ने मरणोत्तर जीवन पर अनुसन्धान सतत जारी रखा है एवं ऐसे सभी घटना प्रसंगों को सत्यापित करने का प्रयास किया है, जिनमें अदृश्य आत्माओं से सहयोग स्थापित करने का दावा किया गया था।

महाकवि विलियम ब्लैक के बारे में यह प्रसिद्ध है कि वे अर्धरात्रि में मृतात्माओं से सम्पर्क कर उनसे वार्त्तालाप किया करते थे। वे आत्माएँ उन्हें अनेक विषयों पर महत्त्वपूर्ण सलाह व मार्गदर्शन दिया करती थीं। अमेरिका की श्रीमती रूथ माण्टगुमरी के अनुसार उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'द वर्ल्ड बियॉण्ड' उनकी स्वयं की रचना नहीं है: अपितु स्वर्गीय आर्थर फोर्ड की आत्मा द्वारा लिखवायी गयी है। उन्होंने तो सिर्फ उसे

कलमबद्ध भर किया था।

आर्थर एडवर्ड स्टिल बैक अमेरिका का एक दरिद्र व्यक्ति था और कुलीगिरी की छोटी–सी कमाई पर अपना जीवन–यापन करता था। वह कहा करता था कि छः प्रेतों की एक मण्डली २० वर्ष की उम्र से हर काम में उसकी सहायता करने लगी। इनमें इन्जीनियर, लेखक, कवि व अर्थशास्त्री की आत्माएँ सम्मिलित थी। प्रेतों ने कहा कि तुम यदि हमारा कहना मानोगे तो बड़े आदमी बन जाओगे। उनने उसकी अच्छी–खासी नौकरी छुड़वा दी और कहा तुम अपना रेल मार्ग बनाओ, नहर खोदो तथा बन्दरगाह बनाओ, तुम्हें इनसे बहुत लाभ होगा। बेचारा आर्थर स्तब्ध था कि नितान्त दरिद्रता की स्थिति में ऐसा कैसे सम्भव हो सकेगा, पर जब प्रेतों का आश्वासन मिला तो उसने कठपुतली की तरह सारे काम करते रहने की सहमति दे दी और असम्भव दीखने वाले साधन जुटने लगे। आर्थर पूरी तरह प्रेतात्माओं पर आश्रित था। उसके पास न तो ज्ञान था, न अनुभव और न साधन, फिर भी उसके शेखचिल्ली जैसे सपने एक के बाद एक पूरे होते चले गये। जब वह मरा तो अरबों की सम्पत्ति छोड़ गया।

सत्प्रयोजनों हेतु तत्पर–

श्रेष्ठ कार्यों के लिए जिनमें, मातृभूमि की रक्षा, जैसे मानवी कर्त्तव्य भी आते हैं, अदृश्यआत्माएँ निरन्तर सहयोग हेतु उद्यत रहती हैं।

सच्ची श्रद्धा और भक्ति भावना के साथ पितरों का स्मरण किया जाय तो वे अति समर्थ सत्ताएँ निश्चय ही सत्प्रयोजनों हेतु मदद के लिए आगे आ जाती हैं। इस सन्दर्भ में द्वितीय महायुद्ध की एक घटना विलक्षण प्रमाण है। इस युद्ध–शृंखला में मोन्स लड़ाई का यह प्रामाणिक और सुरक्षित युद्ध दस्तावेज विद्यमान है–

इस युद्ध में ब्रिटिश सेना बुरी तरह मारी–काटी गई। कुल ५०० सैनिक शेष रहे थे। जर्मन सेनाएँ उन्हें भी काट डालने की तैयारी में

थीं। उनकी संख्या उस समय दस हजार थी। ब्रिटिश सैनिकों में से एक सिपाही ने कभी सेंट जार्ज की तस्वीर एक होटल में देखी थी। यह तस्वीर एक प्लेट में कढ़ी थी और उसके नीचे लिखा था–'सेंटजार्ज इंगलैण्ड की सहायता करने को उपस्थित हों।' वह कभी इंगलैण्ड के प्रख्यात सेनापति थे और अपने कई हजार सैनिकों के साथ युद्ध में मारे गये थे। उनकी याद आते ही सैनिकों ने अपनी सम्पूर्ण भावना और आत्म–शक्ति से सेंट जार्ज का स्मरण किया और दूसरे क्षण स्थिति कुछ और ही थी। बिजली सी कौंधी और ५०० सैनिकों के पीछे कई हजार श्वेत वस्त्रधारी सैनिकों की–सी आभा दिखाई देने लगी। दूसरे ही क्षण दस हजार सेना मैदान में मरी पड़ी थी। रहस्य तो यह था कि किसी भी सैनिक के शरीर में किसी भी अस्त्र का कोई चोट या घाव तक नहीं था। इस घटना ने इंगलैण्ड में एक बार तहलका मचा दिया कि सचमुच मृत्यु के उपरान्त आत्मा का अस्तित्व नष्ट नहीं होता, वरन् रूपान्तर होता है और वह आत्माएँ अदृश्य होते हुए भी स्थूल सहायताएँ पहुँचा सकती हैं।

सन् १९६५ का भारत–पाकिस्तान युद्ध चल रहा था। १३ नव० को भारतीय सैनिकों की एक छोटी टुकड़ी नक्शे के सहारे जम्मू कश्मीर की घाटियों की ओर बढ़ रही थी। 'कमाण्ड पोस्ट' से वायर लेस सेट द्वारा टुकड़ी सम्पर्क बनाये हुए थी। पर नक्शे अथवा 'पोस्ट' से प्राप्त निर्देशों के बावजूद भी आगे का मार्ग स्पष्ट नहीं हो रहा था। वापस पीछे भी लौटना खतरे से खाली न था। अगली भारतीय चौकी अभी १५ मील दूर थी, जहाँ सवेरा होने के पूर्व पहुँचना था, अन्यथा डर था कि समीप में गश्त दे रहे पाकिस्तानी सैनिकों से मुठभेड़ न हो जाय। भयंकर बर्फ गिरने के कारण मार्ग अवरुद्ध था और अस्पष्ट भी। सभी गहरी चिन्ता में डूबे–किंकर्त्तव्य विमूढ़ बने खड़े थे। इतने में पेड़ों के झुरमुट से पदध्वनि सुनायी पड़े। सैनिकों ने देखा कि सामने एक भारतीय लेफ्टीनेंट खड़े हैं। उन्होंने कहा आगे रास्ता खतरनाक है, आप लोग उससे

अपरिचित हैं। मेरे पीछे–पीछे चलते आइये। सैनिकों ने देखा कि लेफ्टीनेन्ट की कमीज में पीठ पर गोल निशान है। लगता था उतना अंश जल गया हो। लेफ्टीनेन्ट ने स्वयं बताया कि कल की पाकिस्तानी गोलीबारी से पीठ पर का हिस्सा जल गया है। बात के रुख को मोड़ देते हुए लेफ्टीनेन्ट ने कहना आरम्भ किया कि 'कभी–कभी मृत आत्माएँ भी आपत्तिकालीन परिस्थितियों में अपने स्नेह–पात्रों का सहयोग करती हैं। इस विषय पर बातचीत चलती रही, तब तक सामने चौकी आ गयी लेफ्टीनेन्ट ने चौकी की ओर इशारा किया तथा वहाँ स्वयं जाने में असमर्थता व्यक्त की। दस–पन्द्रह गज चलने के बाद सैनिकों ने पीछे मुड़ कर देखा। आश्चर्य! कि लेफ्टीनेन्ट का कहीं नामोनिशान नहीं था। एक मिनट से भी कम समय लगा होगा। इतनी देर में कहीं दूर जाने की सम्भावना भी नहीं थी। कुछ सैनिकों ने उत्सुकता वश पीछे वापस लौटकर पता लगाने की कोशिश की, पर कहीं कुछ भी पता न लग सका। चौकी पर पहुँचने के उपरान्त सैनिकों ने चौकी कमाण्डर से पूरा विवरण बताया, यह सुनकर कमाण्डर को आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कमाण्डर ने बताया कि कल ही बमबारी में उक्त लेफ्टीनेन्ट की मृत्यु पीठ पर चोट लगने से हो गयी थी, जिसका दाह संस्कार भी कर दिया गया था। लेफ्टीनेन्ट के रूप में अवश्य ही वह उनका प्रेत स्वरूप था, जिसने अदृश्य सहायक के रूप में प्रकट होकर सैनिक टुकड़ी की सहायता की।

आत्मीय परिजनों को चेतावनी—

कभी–कभी अदृश्य आत्माएँ अपने अस्तित्व को दर्शाकर नीति सदाचार का प्रतिपादन कर आस्तिकवादी मान्यताएँ दृढ़ बनाती हैं। तब कर्मफल की प्रतिक्रिया का सिद्धान्त सुनिश्चित लगता है।

पश्चिम जर्मनी के एक अनाथ आश्रम के संचालक एडवर्ड नेपल्स एक ईमानदार और प्रामाणिक व्यक्ति समझे जाते थे, पर उन्होंने जीवन

के अन्तिम चरण में आश्रम की सम्पत्ति का एक बड़ा भाग चुपके से अपने नाम कर लिया था। मरते समय उन्हें इस बात का भारी पश्चात्ताप हुआ। तब तक उनकी अप्रामाणिकता का भेद भी खुल चुका था। आश्रम के ट्रस्टियों ने उनके मरने के बाद कोर्ट में दावा किया। पर कोई प्रमाण नहीं था, जिसके आधार पर यह सिद्ध हो सके कि एडवर्ड के पुत्र को प्राप्त सम्पत्ति आश्रम की है। पुत्र को इस बात की पूरी जानकारी थी। न्यायालय में बयान देते समय उसने इस बात से स्पष्ट इन्कार कर दिया कि पिता से प्राप्त सम्पत्ति आश्रम की है। ठीक बयान देते समय एक विलक्षण घटना घटी। कोर्ट में एक तेज आवाज गूँजी तथा एक तमाचा लड़के के गाल पर पड़ा। सभी यह देखकर आश्चर्यचकित थे। लड़के को यह समझते देर न लगी कि यह तमाचा उसके पिता द्वारा मारा गया है। उसने अपनी गलती स्वीकार कर आश्रम की सम्पत्ति वापस लौटा दी।

स्ट्रावर्ग की जून १९६१ की बात है। जेमी केलेधन नामक एक व्यक्ति शराब के नशे में धुत आधी रात बीते वापस घर की ओर बढ़ रहा था। इतने में पीछे से आवाज आयी 'रुको'! मुड़कर देखा तो कहीं कोई नहीं नजर आ रहा था। आगे बढ़ने वाला ही था कि पुनः वही नारी आवाज सुनायी पड़ी। केलेधन का नशा गायब हो गया। आवाज उसे सुपरिचित–सी लगी। ध्यान देने पर उसे मालूम हुआ कि आवाज उसकी माँ की है, जो कुछ वर्षों पूर्व दिवंगत हो चुकी थी। अदृश्य स्वर पुनः गूँज उठे 'बेटे! तुम इन कुकृत्यों को छोड़ दो। तुम्हें नहीं मालूम कि तुम्हारे इन कारनामों को देखकर मरणोपरान्त भी मुझे कितना कष्ट पहुँच रहा है। माँ की वेदनापूर्ण बातों को सुनकर केलेधन अपने कुकृत्यों के विषय में सोचने लगा। सचमुच ही उसने समूची पैतृक सम्पत्ति शराब में बहा डाली थी, और स्वयं अनेकों प्रकार के अवगुणों का शिकार बन गया था। केलेधन ने संकल्प लिया कि आज से वह अपने जीवन में

प्रमाण जानने के लिए केलेधन ने कहा कि –मैं सभी बुरी आदतें छोड़ दूँगा, पर यदि तुम मेरी माँ हो तो अपने स्पर्श द्वारा मुझे आभास कराओ।' इतना कहना था कि माँ ने ममता भरा हाथ केलेधन के सिर पर रख दिया और पीठ को सहलाया। हाथ के निशान कमीज पर उभर आये। लन्दन के परगेटी म्यूजियम में केलेधन की वह कमीज आज भी सुरक्षित रखी है, जिस पर प्रेतात्मा के हाथ के निशान उभरे हुए हैं।

ये विदेशी प्रमाण तो यहाँ जान बूझकर दिए गये हैं; क्योंकि मरणोत्तर जीवन के संबंध में सर्वाधिक भ्रान्तियाँ वहीं सर्वव्याप्त हैं। आस्तिकता का ऊपर से समर्थन करने के बावजूद वे मरणोत्तर जीवन के प्रसंग में अपनी हठधर्मी पर उतर आते हैं।

इटली की एक प्रसिद्ध नायिका जूलियट की मृत्यु के बाद आने–जाने वाले हजारों पत्रों के उत्तर लोगों के पास पहुँचते रहे। जिनके पास पत्र पहुँचे उनके पत्र पूर्व पत्रों की बिल्कुल संगति में थे। कई में पूर्व पत्रों का उल्लेख भी रहता था। यह कहानी भी बड़ी विचित्र है कि जूलियट की जहाँ समाधि थी वहीं पर दो लैटर बक्स टाँगे गये थे। एक में पत्र आते थे, दूसरे में डाले जाते थे जिन्हें डाकिया नियमित रूप से ले जाता था। समाधि का रक्षक इटोरे सोलोमिनी उत्तर लिखता था, पर उसका कहना था कि पत्रों के उत्तर जूलियट की आत्मा लिखाती थी। उस अवधि में उसे कुछ भी ज्ञान नहीं रहता था।

विश्व विख्यात भविष्य वक्ता कीरो के पिता का देहान्त हो गया। कुछ महीने बाद कीरो के पिता की आत्मा का सन्देश मिला। कीरो कुछ गुम दस्तावेजों को लेकर अत्यन्त परेशान थे। प्रेतात्मा ने उन्हें बताया कि दस्तावेज लन्दन के डेविस एण्ड सन सालिसिटर के यहाँ रखे हैं। उनका दफ्तर स्ट्रेण्ड में गिरजाघर के पास एक तंग सड़क पर है। बताये गये संकेतों के आधार पर कीरो उस व्यक्ति के पास पहुँचे, तो सचमुच वे दस्तावेज मिल गये। कीरो ने इस घटना का उल्लेख अपनी पुस्तक में किया है।

ऐसे एक नहीं, अनेक घटना प्रसंग हैं जो एक अदृश्य लोक की जानकारी देते हैं, जहाँ से आदान–प्रदान करके लाभान्वित हुआ जा सकता है। जो दृश्यमान हैं, मात्र वही सत्य नहीं है। यह ब्रह्माण्ड विराट् पुरुष का सुविस्तृत काय–कलेवर है, जिसमें असीम पदार्थ एवं अनन्त चेतन सामग्री भरी पड़ी है। दोनों की मिली भगत ही है जो इस सृष्टि व्यवस्था को चला रही है। परोक्ष जगत् के इस सूक्ष्म बैभव का परिचय देने हेतु यदा–कदा घटना प्रसंग घटते रहते हैं। जो मृतात्माएँ पृथ्वी पर स्थित अपने प्रियजनों से स्नेह सौजन्य एवं सहयोग का सिलसिला बिठाना चाहती हैं, उनका मन्तव्य निश्चित ही मनुष्य को डराना नहीं है, यह सुनिश्चित समझ लिया जाना चाहिए।

अब यह एक स्थापित तथ्य है कि अशरीरी आत्माओं से सम्बन्ध स्थापित किये जा सकते हैं और उनका सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। ऐसा करने में एक विशेष स्तर पर विकसित अन्तः चेतना वाले व्यक्ति ही समर्थ हैं। अशरीरी आत्माओं से सम्पर्क स्थापित कर सकने की प्रविधि का विश्लेषण करते हुए एमाहार्डिज ने अपनी पुस्तक 'पाईन अमेरिकन स्प्रिचुअलिज्म' पुस्तक में लिखा है कि मन का कार्य केवल इच्छा, कल्पना और निर्णय करने जैसे सामान्य स्तर तक ही सीमित नहीं है, उसमें कुछ विलक्षण शक्तियाँ भी भरी पड़ी हैं। ऐसी जिनसे औरों को प्रभावित किया जा सके। औरों से अर्थ–पदार्थ भी है और चेतना भी। अतीन्द्रिय विज्ञानी इस शक्ति को 'साइको काइनेसिस' नाम देते हैं। इस क्षेत्र में चल रही शोध यह बताती है कि इस बात के ढेरों प्रमाण हैं। जिनसे मनुष्य की अन्तः चेतना द्वारा जड़ पदार्थों को ही नहीं अशरीरी आत्माओं को भी प्रभावित किया जा सकता है और उनका सहयोग प्राप्त हो सकता है।

फ्रेडरिक मायर्स के अनुसार इस स्तर का विकास मनुष्य को अतीन्द्रिय अनुभूतियाँ करा सकता है। इस तरह की अद्भुत और विलक्षण कही जाने वाली सभी क्षमताएँ मनुष्य में बीज रूप से विद्यमान

हैं, जिन्हें 'सबलिमिनल सेल्फ' कहते हैं। उन्होंने अपने निज के अनुभवों, प्रयोगों और निष्कर्षों की चर्चा करते हुए बताया है कि मनुष्य के भीतर एक ऐसा तत्त्व है, जिसके आधार पर दूरवर्ती छिपी हुई तथा भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं की जानकारी मिल सकती है। अप्रकट रहस्यों के प्रकटीकरण और अशरीरी आत्माओं के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की सम्भावना को उन्होंने चेतना स्तर वालों के लिए सहज ही सुलभ बताया है।

फ्रेडरिक मायर्स मनोविज्ञान के जन्म दाताओं में से एक माने जाते हैं। उन्होंने हर व्यक्ति में अन्तःचेतना का एक विशेष स्तर होना स्वीकार किया है जिसे "सुप्रालिमिनल सेल्फ" की संज्ञा उन्होंने दी है। वे कहते हैं कि इस स्तर का विकास ही अशरीरी आत्माओं से सहयोग का माध्यम बनता है। हर व्यक्ति अने सबलिमिनल सेल्फ को विकसित कर, प्रसुप्त को जगाकर सुकरात की भाँति अपने 'डेमन' से उसी प्रकार अनुदान–सहयोग प्राप्त करता रह सकता है।

सहयोगी मृतात्माओं के अपने–अपने स्तर–

साधारण मृतात्माएँ वे होती हैं, जो अपने स्वजनों–आत्मीयों, बन्धु–बान्धवों से ही सम्बन्ध को उत्सुक रहती हैं। उनकी दुनिया सीमित ही रहती है। अपनेपन का उनका दायरा घर–परिवार तक ही सीमित रहता है, उनकी कामनाएँ भी सीमित और साधारण होती हैं। परिजन–प्रियजन से मृत्यु के उपरान्त कुछ दिनों तक मिलते रहना, उन्हें छिटपुट जानकारियाँ दे देना, प्रणय–निवेदन कर देना, साथ–साथ थोड़ी देर रह लेना या मृत्यु के पूर्व की अपनी किसी वासना आकांक्षा की इस सम्पर्क द्वारा पूर्ति कर–करा लेना ही उनका उद्‌देश्य होता है।

पितर आत्माएँ इनसे भिन्न हैं। इनका उद्‌देश्य आत्म कल्याण के लिए पथ–प्रदर्शन करना, सत्परामर्श देना ही होता है। उनकी निज की कोई वासना नहीं होती। कोई क्षुद्र प्रयोजन पितरों के इस सम्पर्क के

पीछे नहीं होता, वे तो सन्मार्ग दिखलाने के लिये ही सम्पर्क करते हैं।

आत्म चेतना के विस्तार की दृष्टि से ये पितर–आत्माएँ भी दो प्रकार की होती हैं। एक तो वे जो मृत्यु–पूर्व की अवधि के कुल–वंश के सगे–सम्बन्धियों को ही आत्मीय मानतीं, उनको ही सत्परामर्श देतीं, ाथ–प्रदर्शन करतीं और लाभ पहुँचाती हैं। दूसरी वे उदार–पितर आत्माएँ हैं, जिनकी आत्मीयता की परिधि अति विस्तृत हो चुकी होती है, जो सत्प्रवृत्तियों सद्भावनाओं के आधार पर सगापन मानती हैं। पूर्व के किसी परिचय–सम्बन्ध की उन्हें रञ्च मात्र अपेक्षा नहीं होती। जो सन्मार्गगामी हैं, सद्भाव सम्पन्न हैं, वही आत्मीय हैं। ऐसी पितर–आत्माएँ प्रत्येक उत्कृष्ट व्यक्ति को सहायता पहुँचाने को तत्पर एवं प्रस्तुत रहती हैं। वे किसी भी सत्पात्र से सम्पर्क करने में समान रूप से सन्तोष–आनन्द अनुभव करती हैं।

संगीतकार पितर–

हाल ही में लन्दन की एक अधेड़ संगीतकार महिला रोजमेरी ब्राउन का मामला प्रकाश में आया है, जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि उसे बाख, बोथोवेन, शोपो, देबुसीलिज्ट, शूवर्ट आदि महान् संगीतकारों की आत्माएँ संगीत का शिक्षण देती और अभ्यास कराती हैं। स्मरणीय है कि इन संगीतकारों का देहावसान हुए कई वर्ष बीत चुके हैं।

श्रीमती ब्राउन जब सात वर्ष की थी, तो उसने रात को देखा कि काला कोट पहने कोई छाया उसके विस्तरे की ओर बढ़ रही है। इस दृश्य को देख कर वह इतनी भयभीत हो गई कि उनके मुँह से चीख भी नहीं निकल सकी। उस काली छाया ने ब्राउन को पुचकारा और उसकी पीठ पर हाथ फेरा। आश्चर्य की बात है कि चारों ओर से बन्द उस कमरे में वह छाया किस प्रकार प्रकट हुई और बिना कोई आहट हुए रोजमेरी तक पहुँच गई? जबकि पास में ही उसके माता–पिता सोये हुए थे। उस काली छाया का चेहरा साफ दिखाई देने लगा और

रोजमेरी को आश्वस्त भी कर रही थीं, कहा–"घबड़ाओ मत मेरी बेटी! मैं तुझे एक प्रसिद्ध संगीतकार बनाऊँगा और तुम्हें संगीत सिखाऊँगा।

इसके वर्षों बाद तक उस काली छाया से कोई सम्पर्क नहीं हुआ। इस बीच रोजमेरी का विवाह हो गया, वह दो बच्चों की माँ भी बन गई और दुर्योगवश सन् १९६१ में उसके पति का निधन हो गया। बचपन में उसे संगीत सीखने का शौक पैदा हुआ था; परन्तु वह साधारण संगीत शिक्षा ही प्राप्त कर सकी थी। पति का निधन होने के बाद रोजमेरी को अपने और अपने बच्चों के निर्वाह की चिंता रहा करती थी। घर की हालत कोई अच्छी नहीं थी कि उस ओर निश्चिन्त रहा जा सके। इसलिए उसका अधिकांश समय गुजर बसर की व्यवस्था करने में ही बीतता था। इस मुफलिसी में उसे संगीत सीखने या संगीत सभाओं में जाने के लिए न पैसा था और न समय; पर उसमें संगीत सीखने की तीव्र लालसा थी। वह काली छाया जो उसे सात वर्ष की आयु में दिखाई दी, वही नहीं उसके साथ अन्य छायाएँ भी थीं। अब तक रोज ब्राउन ने संगीत शाखा का जो अध्ययन किया था और जिन संगीतकारों के बारे में जाना–पढ़ा था, उन्हें देख कर उसने पहचाना कि यह आत्मा विख्यात पियानों वादक फ्रांज लिज्ट की है। फ्रांज लिज्ट के साथ और भी कई संङ्गीतकारों की आत्माएँ थीं।

इन भूत संगीतकारों ने उसे अब तक लगभग ४०० संगीत रचनाएँ सिखाईं। इनमें शूवर्ट का ४० पृष्ठों का सोनारा और १५ गीत शोपा की रचना तथा बीयोवन के दो सोनारा आदि हैं। कहा जाता है कि रोज ब्राउन को संगीत सिखाने और नई रचानाएँ तैयार करवाने में लिज्ट की आत्मा उसका हाथ पकड़ कर मार्गदर्शन करती है। कौन सी धुन किस प्रकार निकलनी चाहिए, यह सिखाने के लिए संगीतकारों की आत्माएँ उसे गाकर समझाती भी हैं। ऐसा नहीं है कि वे दावे निराधार हों, इन दावों की सत्यता जाँचने के लिए कुछ पत्रकारों और परामनोवैज्ञानिकों ने जाँच पड़ताल भी की। उन आत्माओं के चित्र भी लिए गये और इन दावों को सच पाया गया।

ब्रिटेन के प्रसिद्ध संगीतकार सर डोनाल्डटास की आत्मा भी रोजमेरी के पास आती है। स्मरणीय है कि डोनाल्डटास का देहावसान सन् १६४० में ही हो गया था। पर उनकी आत्मा अभी भी रोजमेरी को संगीत की शिक्षा देती है। वह प्रतिदिन काम से निपट कर दस बजे से शाम के चार बजे तक संगीत शिक्षा प्राप्त करती है। मृत संगीतकारों की आत्मायें इस बीच छः घण्टे तक उसके पास रहती हैं।

रोजमेरी का जीवन गरीबी और कठिनाइयों से भरा था। वह एक स्कूल में रसोईदारिन का काम करती थी, उसी में से उसने समय निकाला और अपने अदृश्य सहायकों की सहायता से संगीत साधना का क्रम चलाया। लोगों ने उनके कथन में यथार्थता पाई तो उन्होंने स्वर्गीय आत्माओं द्वारा निर्देशित कुछ संगीत निर्देशावलियाँ नोट कराने का अनुरोध किया। उसने यह स्वीकार कर लिया। फलतः ३००० शब्दों की एक संगीत निर्देश माला प्रकाशित हुई। नाम है उसका "टेन कमांडमेन्ट्स फार म्यूजिशियन्स"। इन निर्देशों के आधार पर ग्रामोफोन रिकार्ड बने हैं। स्वर्गीय आत्माओं के संगीत से परिचित लोगों को इस सादृश्य ने बहुत प्रभावित किया है।

मनोविज्ञान शास्त्र के सुप्रसिद्ध शोधकर्त्ता श्री मारिश वार्व नेल की मान्यता है कि रोजमेरी को अतीन्द्रिय श्रवण और दर्शन की विलक्षण शक्ति प्राप्त है और वह उसी के सहारे प्रगति कर रही है।

सन् १६३६ में न्यूयार्क से पेरिस आयी एक महिला श्रीमती बीजरूथ के साथ भी ऐसी ही घटना घटी, जब उसे सौ वर्ष पूर्व दिवंगत हो चुके चित्रकार गोया ने चित्रकला सिखाई। बीजरूथ चित्रकला सीखने के उद्देश्य से ही पेरिस आयी थीं। उनका विश्वास था कि पेरिस में रहकर कलाकारों से अच्छी तरह सम्पर्क सान्निध्य स्थापित किया जा सकेगा और उसका लाभ उठाया जा सकेगा। लेकिन कलाकारों से सम्पर्क करने और उनसे कुछ सीखने के लिए भी तो थोड़ा बहुत पूर्वाभ्यास या

कला के बीज चाहिए। बीजरूथ इन सब बातों से एकदम रहित थी। उन्होंने काफी प्रयत्न किया कि चित्रकला का कुछ अभ्यास किया जा सके और अपने आप को एक छोटे–मोटे चित्रकार के रूप में प्रतिष्ठित कर सके; लेकिन बार–बार अभ्यास करने पर भी कुछ सफलता नहीं मिल सकी।

कई दिनों तक अभ्यास करने के बाद भी जब कोई सफलता नहीं मिली, तो बीजरूथ निराश होने लगी, एक दिन वह निराशा के गहन अन्धकार में डूबी सोच रही थी कि मेरा पेरिस आना व्यर्थ रहा। यहाँ आये कई महीने हो जाने के बाद भी तो सृजन की प्रेरणा का कोई मूर्त रूप सामने नहीं आ सका है। उन्हें पेरिस आये कई महीने हो चुके थे। आते समय यह सोचा था कि वहाँ के कलात्मक वातावरण में कई विषय मिलेंगे, पर ऐसा कुछ नहीं हो सका। घण्टों हाथ में ब्रुश लिए बैठी रहती थी और फिर उसे ज्यों का त्यों रख देती थी। उस दिन वह बहुत निराश व उदास थी। रात को सोने से पहले भी उन्हें घनघोर उदासी घेरे हुई थी।

इसी निराशा, हताशा और उदासी के बीच कब नींद आ गई? कुछ पता नहीं चला। उदासी निराशा और थकान में डूबी बीजरूथ को गहरी नींद आ गयी और जब वह गहरी नींद में सो गई, तो उन्हें लगा कि कोई अज्ञात शक्ति उन्हें झिझोड़ कर उठा रही है। वह परवश सी नींद में सोते हुए ही स्टूडियों की ओर चल पड़ी। बीजरूथ को कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि यह सब क्यों और कैसे हो रहा है? स्टूडियो में आकर उन्होंने अन्धेरे में ही कागज पर ब्रुश चलाना शुरू कर दिया। उन्होंने पाया कि उनके हाथ बड़ी तेजी से चल रहे हैं और उन्हें अपने चित्र के बारे में कुछ भी नहीं मालूम है। उन्हें लग रहा था कि कोई अज्ञात शक्ति उन्हें माध्यम बना कर अपनी मनचाही कलाकृति का सृजन कर रही है और जो कुछ भी घट रहा है, उस पर उनका कोई वश नहीं है। कुछ देर बाद बीजरूथ के हाथ अपने आप रुक गये, लगा

चित्र पूरा हो गया है और वह जिस तरह बिस्तर से उठ कर स्टूडियो तक आई थी, उसी प्रकार वापस चलती हुई बेडरूम में पहुँच गई और बिस्तर पर सो गयी।

सुबह उठते ही बीजरूथ को रात वाली घटना याद आई। उन्होंने स्टूडियो में जाकर देखा, तो दंग रह गयीं। वह समझ ही नहीं पायी कि बिना किसी प्रेरणा के, बिना किसी अनुभव के और बिना कुछ सोचे–विचारे, योजना बनाये इतना सुन्दर चित्र कैसे बन गया है? चित्र सचमुच इतना उत्कृष्ट और असाधारण रूप में सुन्दर था कि उस की मुँह माँगी कीमत मिल सकती थी। पर बीजरूथ को इससे ज्यादा यह जानना आवश्यक लग रहा था कि इस कलाकृति का निर्माण कैसे हो गया? सारा दिन इसी उधेड़बुन में लग गया। अगली रात फिर वैसी ही घटना घटी। अब तो बीजरूथ की हैरानी का कोई ठिकाना नहीं था। जरूर ही कोई अदृश्य शक्ति उन्हें चित्रकला का अभ्यास करवा रही है।

उन्हीं दिनों बीजरूथ को एक ऐसी महिला के बारे में पता चला, जो किसी भी वस्तु को देखकर या छूकर उसके सम्बन्ध में जानी–अनजानी, प्रकट–अप्रकट बातें बता सकती थी। बीजरूथ ने उस महिला से सम्पर्क साधा और उस महिला ने कलाकृतियों को छूकर उनका अदृश्य इतिहास बताया। उसके अनुसार बीजरूथ को नींद से उठाकर चित्रकला सिखाने वाली शक्ति स्पेन के प्रख्यात चित्रकार गोया की आत्मा थी, जिनकी मृत्यु सन् १८२८ में हुई थी। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में स्पेन स्थित अपने दुश्मनों से मुक्ति पाने के लिए गोया ने फ्रांस के दक्षिणी भाग में स्थित बीजरूथ के पति के पूर्वजों के घर में शरण ली थी। वे उन दिनों काफी असहाय थे और मरने से पहले तथा मरने के बाद भी उनको हार्दिक आकांक्षा रही थी कि वे मि० रूथ के पूर्वजों के एहसान का बदला किस प्रकार चुकायें। जिन लोगों के घर में गोया ने अपने जीवन के संध्याकाल में शरण प्राप्त की थी, उन्हीं के वंश की बीजरूथ को कष्ट में देखकर गोया ने उनकी सहायता करने का

निश्चय किया और इस प्रकार निद्रित अवस्था में बीजरूथ की सहायता की तथा उन्हें मार्गदर्शन दिया।

अशरीर आत्माओं का अस्तित्व और उनके द्वारा मनुष्य को सहयोग यह एक तथ्य है। डरावनी तथा घिनौनी प्रकृति के भूत–प्रेत कम ही होते हैं। साधारणतया उच्च आत्मायें मनुष्यों की सहायता ही करती हैं और अपनी उच्च प्रवृत्ति के कारण दूसरों को आगे बढ़ाने तथा खतरों से बचाने के लिए पूर्व संकेत भी करती हैं। जिस प्रकार उदार मनुष्य अकारण दूसरों की सेवा सहायता करने के लिए तैयार रहते हैं, वैसे ही सूक्ष्म शरीरधारी आत्मायें लोगों को उपयोगी ज्ञान देने अथवा आत्मा का अस्तित्व शरीर न रहने पर भी बना रहता है, यह विश्वास दिलाने के लिए कुछ व्यवहारिक सहयोग देती रहती हैं।

उदात्त आत्मायें पितर रूप में समस्त सत्पात्रों की सहायता के लिए सदैव प्रस्तुत रहती हैं। उनकी आत्मीयता की परिधि अति विस्तृत होती है। ये पितर सत्तायें पात्रता देखती हैं, परिचय की पृष्ठभूमि नहीं; क्योंकि सत्पात्र का परिचय उन्हें तो मिल ही जाता है और दूसरे को अपना परिचय देने की उनकी कोई निजी आकांक्षा नहीं होती। वे तो कल्याण–पथ में नियोजित कर देना ही अपना कर्तव्य मानती हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी को एक पितर–सत्ता ने ही श्री हनुमान् और भगवान् राम के दिव्य–दर्शनों की विधि सुझाई थी और उन्हें एक अनाथ भावनाशील बालक से एक भक्त महाकवि और सन्त बन जाने में महान् भूमिका निभाई थी।

भयानक प्रेतात्मा अन्ततः सहायक बनी–

इंग्लैण्ड की डफरिन और अवा रियासतों के सामन्त लार्ड डफरिन कभी भारतवर्ष के वायसराय रह चुके थे। कनाडा के गवर्नर जनरल और रोम के राजदूत रहने का भी उन्हें सौभग्य मिला था। सन् १८९१ में वे पेरिस के राजदूत नियुक्त हुए। एक दिन उन्हें एक मित्र ने

आयरलैंड में एक दावत दी। रात के बारह बजे तक भोज चला। उनके लिए अत्यन्त सजे हुए कमरे में विश्राम की व्यवस्था कर दी गयी। लार्ड डफरिन अभी लेटे ही थे कि सारा कमरा एकाएक तीव्र प्रकाश से भर गया। यों उस दिन पूर्णमासी थी। बाहर चन्द्रमा पूरे वेग से छिटक रहा था तो भी कमरों के सभी दरवाजों और खिड़कियों पर पर्दा पड़ा था। भीतर प्रकाश जाने की कोई सम्भावना नहीं थी। बल्व बुझे हुए थे। लार्ड डफरिन को शंका हुई, वे उठे, सब तरफ देखा, कहीं कुछ गड़बड़ तो नहीं। फिर लेटे ही थे कि वही पहले जैसा तीव्र प्रकाश अनुभव हुआ। उन्होंने अच्छी तरह अपने को परखा कि वे जाग रहे हैं और होश में हैं। फिर खड़े होकर खिड़की से झाँककर देखा तो कुछ ही गज की दूरी पर एक आकृति अपने कन्धे पर एक शव ढोने के कठघरे जैसा बोझ लिए दिखायी दी। वह कराह–सी रही थी। लगता था बोझ भारी है, उसे जाने में कष्ट हो रहा है।

उन दिनों प्रयोगशालाओं के लिए शवों की बड़ी आवश्यकता रहती थी। वैज्ञानिक मुँहमाँगे दाम देते थे, इसलिए फ्रांस में मुर्दों की चोरी की एक आम हवा चल पड़ी थी। डफरिन ने सोचा कोई मुर्दा चोर है सो साहस करके वे आगे बढ़े और पास पहुँचते ही ललकार कर पूछा– "कौन हो?" आकृति ने उनकी ओर थोड़ा घूरकर देखा तो स्तब्ध रह गये। इतना भयानक चेहरा डफरिन ने पहले कभी न देखा था तो भी उन्होंने साहस किया और आक्रमण के लिए जैसे ही थोड़ा आगे बढ़े वह आकृति अन्तर्धान हो गयी। न कोई व्यक्ति था न कोई बोझ। टार्च के सहारे दूर तक देखा, पृथ्वी पर पैरों के कहीं चिन्ह भी नहीं थे। लार्ड डफरिन तब कुछ डरे। यह एक अविस्मरणीय घटना थी। वे कमरे में लौटे और उसी समय जो कुछ जैसा देखा था, वैसे ही डायरी में नोट कर लिया। फिर वे रात भर सो नहीं सके। कुछ दिन में बात आई गई हो गई।

कुछ वर्ष बीते लार्ड डफरिन तब पेरिस के राजदूत ही थे, एक दिन

सभी राजनैतिक व्यक्तियों को भोज दिया गया। पेरिस के ग्रान्ड होटल में उसका प्रबन्ध किया गया। समय पर सब लोग होटल के समीप इकट्ठे हुए। ऊपर होटल तक ले जाने के लिए 'लिफ्ट' (एक ऐसी मशीन जो बिजली के सहारे रेल की तरह ऊपर चढ़ती है, कई मंजिलों की इमारत में वह ऊपर बोझ और व्यक्तियों को पहुँचाने के काम आती है) तैयार थी। वरिष्ठ होने के नाते सब डफरिन की ही प्रतीक्षा में थे।

नियत समय पर जैसे ही वे उस लिफ्ट के पास पहुँचे वर्षों पूर्व देखी हुई वही भयानक आकृति यहाँ उपस्थित पाई। उस दिन की सारी घटना एक सेकण्ड में उनके मस्तिष्क में नाच गयी। वे पीछे हट गये, अपने सेक्रेटरी से भोज में सम्मिलित होने से इन्कार करते हुए, वे लौट पड़े और सीधे होटल के मैनेजर के पास जाकर पूछा–लिफ्ट पर किसे नियुक्त किया गया है? जब तक वह कोई उत्तर दे एक धड़ाम की आवाज आयी, सब लोग लिफ्ट की ओर दौड़े। देखा लिफ्ट बीच में ही कटकर टूट गयी है सारे सवार अतिथि गिरकर चूर–चूर हो गये हैं। डफरिन के अतिरिक्त सभी लोग मर चुके थे। यह समाचार फ्रांस के सभी समाचार पत्रों ने छापा और यह स्वीकार किया कि भूत की सत्ता सचमुच कुछ न कुछ है–उसका विज्ञान कुछ भी होता हो? लुई आन्स्पैचर द्वारा यह घटना "रीडर्स डाइजेस्ट" पत्रिका में भी छपी थी।

उस भयानक आकृति के डफरिन को आयरलैण्ड में शव ढोने वाला बक्सा ले जाते जैसी अशुभ स्थिति में दिखने पर भी उनका अनिष्ट न करना इस अनुमान को बढ़ाता है कि दूसरों के लिए वह कितना भी अशुभ रहा हो, किन्तु डफरिन के प्रति उसके मन में आत्मीयता का कोई कोना सुरक्षित था।

पेरिस के ग्राण्ड होटल में वह छाया–रूप में ही लिफ्टमैन के निकट विद्यमान रहा होगा और लोगों को वह भयानक आकृति नहीं दिखी। नियमित ड्यूटी वाला लिफ्टमैन ही दिखा। मात्र लार्ड डफरिन को वह भयानक पुरुष दिखाई पड़ा। इसका अर्थ है कि वह अपनी

भयानक गतिविधियों में प्रकृतिवश जुटा रह कर भी डफरिन को मूक चेतावनी देना चाहता था। कई प्रेत विद्या विशारदों के अनुसार वह कोई लार्ड घराने का ही क्रूरकर्मी पूर्वज रहा होगा। जिसे मृत्यु के बाद भी ऐसे ही कठोर दायित्व सौंपे गये। श्री लेडबीहट ने भी 'इनविजिबुल हेल्पर्स' में यही लिखा है, जिस आत्मा के जो कार्य अधिक अनुकूल होते हैं, उन्हें परलोक में वैसे ही दायित्वों के निर्वाह का प्रशिक्षण देकर फिर वैसी ही भूमिका सौंप दी जाती है। अपनी सीमा में बँधे हुए भी उस क्रूरकर्मी पितर ने डफरिन को तो चेतावनी देकर उनका हित ही साधा। डफरिन ने उस मूक चेतावनी या गुप्त संकेतपूर्ण आभास को समझ लिया और उसकी उपेक्षा नहीं की, इससे वे लाभान्वित ही हुए।

वस्तुतः हर प्रेतात्मा डराने नहीं आती, यह मानकर चलना चाहिए कि उनसे भयभीत न हुआ जाय, तो प्रकारान्तर से वे सहयोग के निमित्त ही प्रकट होती हैं।

पश्चिम जगत् की एक और ऐसी ही प्रसिद्ध घटना है। सन् १९६७ की दिसम्बर की ठण्डी रात्रि थी। श्रीमती एकले 'हडसन' नदी के किनारे स्थित अपने मकान की बालकनी में खड़ी अपने पति को रवाना होते देख रही थी, यह वही विक्टोरिया कालीन मकान था, जो वर्षों से खाली पड़ा था। झूठ या सच प्रायः हर व्यक्ति यह कहता था कि इस भवन में भूत निवास करते हैं। एक दिन खेत जाते समय श्री एकले की नजर इस पर पड़ी। वे इन बातों पर विश्वास नहीं करते थे। वे प्रतिदिन विचार करते कि इतना भव्य मकान वीरान पड़ा है। केवल इसलिये कि लोग इसे भूत बाड़ा समझ बैठे हैं। रोज इसे खरीदने का वे विचार करते और अन्ततः इसे एक दिन उन्होंने कार्य रूप में परिणत कर दिया। मकान उन्होंने स्वयं खरीद लिया।

उसी रात्रि श्रीमती एकले को ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई उनके समीप खड़ा है। इतना समीप कि उसकी साँसें उनकी गर्दन का स्पर्श कर रही हैं। भूतों से सम्बन्धित सभी कल्पनाएँ उनके मस्तिष्क में घूम

गईं व भयभीत होकर वे वहाँ से जैसे ही भागने को पीछे मुड़ी, उन्होंने देखा कि एक छाया उनके मार्ग में खड़ी है। इस छाया से क्षीण ध्वनि फूटी– "तुम डर कर भागो नहीं। अभी तक जितने भी व्यक्ति इस घर में आये हैं–भयभीत होते रहे हैं, जबकि हमारा उद्देश्य मनुष्यों की सहायता करना, उनसे सहानुभूति अर्जित करना है" इन शब्दों से श्रीमती एकले को साहस मिला। वे आश्वस्त हुईं और बोलीं ' आप लोग कौन हैं– कितने व्यक्ति व इस रूप में क्यों आपको भटकना पड़ रहा है?" छाया ने जवाब दिया कि हम लोग ३ व्यक्ति हैं, जो तुम्हारे वंश के ही हैं। तुम्हारा यहाँ आना एक संयोग मात्र नहीं है। हमारे द्वारा एकले को दी गयी विचार रूप में प्रेरणा ही तुम्हे यहाँ लायी है। मरणोत्तर जीवन में एक योनि ऐसी होती है, जिसमें उच्च अशरीरी आत्माएँ, सहायक आत्माओं के रूप में सूक्ष्म जगत् में भ्रमण करती रहती हैं, व सभी की सहायता करती हैं। जब इस मकान को भुतहा ठहरा दिया गया, तो हमने उचित समझा कि तुम्हें यहाँ बुलाया जाय।" श्रीमती एकले काफी देर तक अपने वंशज पितर से बात करती रहीं। बात का विषय मोड़ कर तथाकथित प्रेत ने हडसन नदी के दृश्य की सुन्दरता की चर्चा आरम्भ कर दी व श्रीमती एकले उसे इतना दत्तचित्त हो देखने लगीं कि उन्हें स्मरण ही नहीं रहा कि कब वह छाया वहाँ से चली गई।

यह बहुचर्चित घटना जो उन दिनों अखबार की सुर्खियों का विषय बनीं, रीडर्स डायजेस्ट के मई १८७७ अंक में भी छपी थी व इसमें इस प्रथम साक्षात्कार के बाद इन सहयोगी आत्माओं से मिले अनुदानों की चर्चा है। विवरण में लिखा है कि एकले परिवार ने पड़ोसियों की आशा के विपरीत उसे खरीदने का निर्णय लिया। आये दिन घर के किसी न किसी सदस्य की भेंट इन अदृश्य आत्माओं से होती रही व अपनी सहायक मनोवृत्ति का परिचय देती रही।

कई बार ये पितर मजाक के मूड में होते। हाथ से मुँह में जा रहा नाश्ता कोई अज्ञात छाया अपने मुँह में झपट लेती एवं सब एक साथ

हँस पड़ते। ऐसा प्रतीत होता कि इनको सिथिया से विशेष लगाव था जो 'एकले' की बड़ी पुत्री थी। यदि वह पढ़ाई हेतु सवेरे नियत समय पर न उठती तो उसका बिस्तर जोरों से हिलने लगता, जब तक वह उठकर बैठ न जाती बिस्तर हिलता रहता। छुट्टियों में सिथिया ने सोते समय प्रार्थना की 'कृपया मुझे देर तक सोते रहने देना।' आत्माओं ने बात मान ली व काफी देर तक थकी हारी सिथिया सोती रही। सिथिया ने अक्सर एक राजसी वेशभूषा में घूम रही महिला की छाया को अपने कमरे में देखा। १९७६ में सिथिया ने विवाह के बाद श्रीमती एकले ने कमरे में प्रवेश करते ही आवाज सुनी 'हमारी ओर से भी सिथिया के लिए कुछ भेंट है जो आशीर्वाद स्वरूप उसे दे देना।' उन्होंने एक आल्मारी खोली व उसमें एक नक्काशी किया चाँदी के चम्मचों का जोड़ा पाया। सिथिया को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई तो औरों की भेंटों के साथ ही उन्हें अपने पितरों से सोने की अँगूठी भी मिली।

ये घटनाएँ बताती हैं कि उदार और सहृदय व्यक्ति मरने के बाद भी अपने स्वभाव की इन विशेषताओं के अनुरूप औरों का हित साधन करते रहते हैं। ठीक उसी प्रकार जैसे कि दुष्ट आत्माएँ अपनी दुष्टता और कुसंस्कारों परपीड़क वृत्ति के कारण मरने के बाद भी भूत–प्रेत बन कर दूसरे लोगों को कष्ट पहुँचाती रहती हैं। उदार सहृदय और सद्भाव सम्पन्न आत्माओं को ही तत्त्वदर्शियों ने पितर और देव आत्माएँ कहा है। उनका सहयोग और मार्गदर्शन हर कोई प्राप्त कर सकता है और वह इसके लिए आतुर तथा उत्सुक भी रहती हैं।

अशरीरी आत्माओं से सम्बन्ध स्थापित करने और उनका सहयोग लेने, उन्हें अपना सहचर बनाने की विद्या भारत में पहले काफी प्रचलित रही है। आज भी इस विद्या के जानकार हैं, परन्तु वे प्रकाश में नहीं आते। अपने को क्षमता से सम्पन्न विज्ञापित करने वालों में अधिकांश व्यक्ति इस विद्या के अस्तित्व का अनुचित ही लाभ उठाते हैं। सदाशयी, उदार और परोपकारी वृत्ति की अशरीरी आत्माएँ स्वयं उन व्यक्तियों का

सहयोग करने के लिए प्रस्तुत रहती हैं, जिनकी अन्तःचेतना विकसित और परिष्कृत हो। वस्तुतः आत्मिकी इतनी सामर्थ्यवान् है कि वह प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों लोकों में भावनात्मक सहयोग एवं क्रियान्वयन का मार्ग खोल सकती है। निश्चित ही इससे दोनों ही पक्ष लाभान्वित व सन्तुष्ट होंगे। मनुष्य की अपनी कार्य परिधि बढ़ेगी एवं पारस्परिक प्रत्यावर्त्तन का एक महत्त्वपूर्ण उपक्रम चल पड़ेगा, जिसकी कल्पना मात्र से रोमांच हो उठता है।



पितर : हमारे शुभचिन्तक सच्चे मार्गदर्शक

व्यावहारिक जीवन में मनुष्य एक–दूसरे की सहायता करते रहते हैं। इस सहकारी प्रवृत्ति के कारण ही मनुष्य बुद्धिमान बना और प्रकृति सम्पदा पर आधिपत्य कर सका है। सर्वथा एकाकी मनुष्य तो निजी सामर्थ्य को देखते हुए अन्यान्य प्राणियों से भी गया–बीता और दुर्बल–असमर्थ सिद्ध होता है। सहकार ही स्वभावगत वह वैभव है, जिसका अभ्यास होने के कारण मनुष्य क्रमशः अधिक ऊँचा उठता और आगे बढ़ता चला गया है।

मनुष्यों में से जो जितने घटिया हैं, वे उतने ही संकीर्ण, स्वार्थ–परता से ग्रसित देखे जाते हैं, उन्हें अपने काम से काम एवं अपने मतलब से ही मतलब रहता है। दूसरों का दुःख–दर्द समझने और उदार–सहकार देने जैसी भावना उठती ही नहीं, सूझ जगती ही नहीं, ऐसे में कोई दुःखी जरूरतमन्द है या नहीं, यह सोचने–देखने की उन्हें फुरसत ही नहीं होती; किन्तु सभी ऐसे नहीं होते। बौद्धिक पिछड़ेपन की तरह यह भावनात्मक अधःपतन पाया तो अनेकों में जाता है, पर सब वैसे नहीं होते। अनेकों की प्रकृति में मानवी गरिमा के अनुरूप आत्मीयता एवं उदारता का भी बाहुल्य होता है और वे मिल–बाँटकर खाने की नीति पर विश्वास करते हैं। औरों का दुःख बँटा लेने और अपना सुख बाँट देने की ललक जगी रहने से वे सेवा–साधना के अवसर ढूँढ़ते रहते हैं और जब भी, जहाँ भी सम्भव होता है अपनी उत्कृष्टता का परिचय देते हैं। सेवा धर्म अपनाने वालों को देवता कहा जाता है।

देवोपम अन्तःकरण प्राप्त कर लेना मनुष्य का सर्वोपरि सौभाग्य माना गया है।

शरीर न रहने पर भी आत्मा का अस्तित्व अक्षुण्ण बना रहता है। मरण और जन्म के मध्य ऐसी ही स्थिति रहती है। इसमें प्रत्यक्ष पंच भौतिक कलेवर न रहने पर भी उनमें ऐसी क्षमता विद्यमान रहती है, जिसके सहारे अपनी उदारता का परिचय दे सके और सेवा–साधना की दृष्टि रखकर दूसरों की सहायता कर सकें। ऐसी ही आत्माएँ देवता कहलाती हैं और वे अपनी स्थिति में रहते हुए भी लोक–कल्याण के लिए कुछ न कुछ करती रहती हैं।

पितर आत्माएँ देव सत्ता का ही पर्याय कही जा सकती हैं। वे समय समय पर जीवित अवस्था की ही तरह सेवा सहायता कर अपना धर्म निबाहती रहती हैं। भले ही ऐसी परोक्ष सहायता को दैवी अनुदान नाम दे दिया जाय, पर एक तथ्य तो अटल है ही कि वे श्रेष्ठ आत्माओं द्वारा सुपात्रों को ही मिलते हैं।

सन् १६८५ में फ्रांस के राजा लुईस चौदहवें के विरुद्ध जनता ने विद्रोह कर दिया। १७०२ में जगह–जगह गुरिल्ला युद्ध होने लगे। सेना–नायक क्लैरिस नामक एक प्रोटेस्टैंन्ट विद्रोही था। राजा को परास्त करने और अपने को वरिष्ठ, योग्य घोषित करने के लिए उसने अग्नि परीक्षा देने की बात कही।

लकड़ियों से ऊँची चिता बनाई गई और क्लैरिस भाव समाधि की स्थिति में उस पर चढ़कर खड़ा हो गया। चिता में आग लगा दी गई। धीरे–धीरे आग की लपटों ने क्लैरिस को चारों तरफ से घेर लिया और क्लैरिस मैदान में उपस्थित ६०० लोगों की भीड़ को सम्बोधित करता रहा। लकड़ियाँ जलकर राख हो गईं। आग बुझ गई तब तक क्लैरिस का भाषण चलता रहा। क्लैरिस अग्नि परीक्षा में विजयी रहा। उसे आँच तक नहीं आई।

सन १८६७ की घटना है। बेल्जियम के सियरे डेरुवियर नामक

व्यक्ति का पैर पेड़ पर से गिरने के कारण टूट गया। हड्डी जुड़ी नहीं, वरन् नासूर की तरह रिसने लगी। जख्म किसी तरह भरता ही नहीं था। बड़ी कठिनाई से ही वे किसी प्रकार दर्द से कराहते पट्टी बाँधे थोड़ी दूर चल सकते थे। जहाँ से पैर टूटा था, वह जगह टेढ़ीकुबड़ी हो गई थी। ऐसी स्थिति तक पहुँचे हुए मरीज को ठीक कर देने का वायदा किसी सर्जन ने भी नहीं किया।

निराश पियरे के मन में एक दिन उमंग उठी, वे सन्त लारेन्स की समाधि तक घिसटते—घिसटते पहुँचे। घुटने टेककर देर तक रोते और दिवंगत सन्त की आत्मा से सहायता की प्रार्थना करते हुए दिन भर बैठे रहे।

सन्ध्या होते—होते वापस लौटने का समय आया, तो वे सामान्य मनुष्यों की तरह उठकर खड़े हो गये और सही पैर लेकर घर लौट आए। परिचितों में से किसी को भी इस घटना पर विश्वास न हुआ। प्रत्यक्ष देखने वालों की भारी भीड़ लगी रही। सभी की जीभ पर अदृश्य वरदान की चर्चा थी।

दक्षिण इटली के फोगिया कस्बे में एक दम्पति के यहाँ नौ वर्षीय बालक जियोवेनियो—लिटिल जान रीढ़ की बीमारी के कारण नन्हें बच्चों जैसा घिसट—घिसट कर हाथ—पैरों के बल चला करता था। एक दिन जियोवेनियों फोगिया की सड़कों पर घिसटता चल रहा था, अचानक उसे अपने पीठ पर दिव्य स्पर्श का अनुभव हुआ। नजर उठाकर ऊपर देखा तो बगल में पादरी पेड्रपियो खड़े थे। कुछ पूछने से पहले ही पादरी चले गये और जियोवेनियों कृतज्ञता से पादरी की कृपा को मन ही मन सराहता रहा। उसकी अपंगता दूर हो गयी थी वह उठ खड़ा हुआ और दौड़ता हुआ अपने घर आया। पादरी पैड्रेपियो की कृपा से वह कृतार्थ हो चुका था।

चिकित्सक परोपकारी पितर—

१९५८ ई० की घटना है । अमेरिका के प्रसिद्ध पत्रकार एवं लेखक

बनर्डिहटन ने स्वयं पर घटित इस घटना का उल्लेख अपनी "हीलिंग हैण्ड्स" नामक पुस्तक में किया है। 'हटन' महोदय न्यूराइटिस रोग से पीड़ित थे, साथ ही उनकी आँखों की देखने की क्षमता भी नष्ट प्राय हो चुकी थी। नेत्र–रोग विशेषज्ञ डा० हडसन उनकी चिकित्सा कर रहे थे। उन्होंने 'हटन' की आँखों के इलाज को असाध्य बता दिया और कहा कि दूसरा आपरेशन करने पर आँखों की शेष क्षीण ज्योति के भी चले जाने का खतरा है।

उसी समय हटन की धर्मपत्नी श्रीमती पर्ल हटन को मालूम हुआ कि बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध के सुविख्यात नेत्र चिकित्सक स्वर्गीय डॉ० लैंग की प्रेतात्मा 'एलिसबरी' के मिस्टर चैपमैन पर आती है और वह चैपमैन के माध्यम से सैकड़ों नेत्र–रोगियों की चिकित्सा सफलतापूर्वक कर चुकी है। श्रीमती पर्ल ने अपने पति से 'एलिसबरी' जाने के लिए आग्रह किया तो बर्नाडे हटन ने उसको भ्रान्ति व अन्धविश्वास कहा। परन्तु श्रीमती पर्ल ने निवेदन करते हुए कहा कि यह समझ लीजिएगा कि 'एलिसबरी' का भ्रमण ही किया है। अस्तु, श्री हटन अपनी पत्रकारिता वाली बुद्धि को लेकर 'एलिसबरी' पहुँच गये।

मि० चैपमैन के यहाँ उन्हीं की प्रतीक्षा की जा रही थी। उस समय युवक चैपमैन पर डॉ० लैंग की आत्मा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई दे रहा था। उसका चेहरा, हावभाव बिल्कुल वृद्ध डॉ० लैंग जैसा लग रहा था। उसने बर्नार्ड हटन को गाड़ी से उतरते ही अपने कक्ष में बुलाया और कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा– "आइये मि० हटन आप नेत्र–रोग से पीड़ित हैं। मैं डॉ० लैंग हूँ, आप की हर सम्भव सहायता करूँगा।"

बर्नार्ड हटन यह देखकर आश्चर्यचकित थे कि युवक चैपमैन के व्यक्तित्व में आकस्मिक परिवर्तन कैसे हो गया। मि० चैपमैन यह सब कुछ आँख बन्द किये तन्द्रा जैसी अवस्था में कह रहे थे। मि० हटन की तर्क बुद्धि कभी इसे सम्मोहन सोचती, कभी टेलीपैथी, कभी 'थॉट ट्रान्सफरेन्स' तो कभी दिव्य–दृष्टि आदि। विचारों का ऊहापोह उनके

मन में चल रहा था। मि० चैपमैन के माध्यम से डा० लैंग मि० हटन की कुर्सी के समीप पहुँचे और अपनी बन्द आँखों को हटन की आँखों के पास जमाकर देखा और बोले—'तुम्हें माइनस १८ नम्बर का चश्मा लगता है।' उस समय वास्तव में ही मि० हटन को माइनस १८ नम्बर लैंस का चश्मा लगता था। बर्नार्ड हटन की आँखों को दो तीन बार उँगलियों से स्पर्श करके डॉ० लैंग ने बताया— "युवक मि० हटन! तुम्हारी आँखों का बचपन में जो ऑपरेशन हुआ था, बिल्कुल ठीक था।' हटन महोदय स्वयं भूल चुके थे कि कभी उनका ऑपरेशन हुआ था; परन्तु तब याद आया कि ६ वर्ष की अवस्था में तत्कालीन प्रसिद्ध डॉक्टर ने उनकी आँखों का ऑपरेशन किया था। उस डॉक्टर की मृत्यु हो चुकी थी।

मि० हटन की आँखों को दुबारा उँगलियों से स्पर्श करके डॉ० लैंग ने कहा—"तुम्हारी आँखों का लिम्फ ड्रेनेज सिस्टम ठीक से काम नहीं कर रहा है— ग्लाकोमा हो गया है।' हटन की समझ में कुछ नहीं आ रहा था, वह तो स्वर्गीय डॉ० लैंग की जानकारी व प्रश्नों से ही हतप्रभ हो गये थे। इसके बाद डॉ० लैंग ने बताया कि 'जिस बीमारी के वायरस तुम्हें कष्ट दे रहे थे, वे तो तुम्हारे डॉक्टर के उपचार से नष्ट हो गये हैं, परन्तु उसके स्थान पर प्रतिक्रिया स्वरूप नई भयंकर बीमारी हो गयी है। हिपेटाइटिस वायरस के आक्रमण के कारण तुम्हारे 'लिवर' को क्षति पहुँच रही और कष्ट बढ़ रहा है। तुम्हारी पूरी शक्ति क्षीण हुई जा रही है।"

मि० हटन महोदय को डॉ० लैंग की बातें, रोग की व्याख्या एक पहेली—सी लग रही थी। उनकी पत्रकार— बुद्धि को कुछ कहते नहीं बन पड़ रहा था। अन्त में डॉ० लैंग ने कहा— "मि० हटन, मैं तुम्हारी आँखों का एक ऑपरेशन करूँगा, जिसमें तुम्हें कोई कष्ट नहीं होगा, क्योंकि यह आपरेशन सूक्ष्म शरीर का होगा स्थूल का नहीं। तुम हमारी बातें और उपकरणों का प्रयोग अनुभव करोगे, पर देख नहीं सकोगे। मेरे अन्य सहायक भी प्रेतात्माएँ हैं।

इतना कहकर डॉ० लैंग ने अपना काम कर दिया। मि० हटन उनकी उँगलियों को चलते, ऑपरेशन के उपकरणों को इधर–उधर प्रयोग करते हुए अनुभव कर रहे थे। डॉ० लैंग बीच में बोलते जा रहे थे–'मैं तुम्हारे सूक्ष्म शरीर को स्थूल शरीर से थोड़ा अलग कर रहा हूँ, फ्लुइड की जाँच कर रहा हूँ, क्रिस्टल, लेन्स, रेटिना.....आदि–आदि!' कुछ मिनट बाद उन्होंने कहा—- 'अब आपरेशन पूरा हो गया है, तुम्हारे सिलियरी मसल्स अत्यन्त कड़े हो गये थे।' इसके पश्चात् डॉ० लैंग ने अपने सहायकों से कहा–'यदि हिपेटाइटिस का उपचार न किया गया तो यह आपरेशन अधिक लाभदायक न होगा।' डॉ० लैंग ने एक बार पुनः आँखें बन्द कीं। उसी मुद्रा में 'हटन' के शरीर पर हाथ फेरा। बर्नार्ड हटन को लगातार महसूस हो रहा था कि जैसे उनके मूर्छित शरीर पर स्पर्श किया जा रहा हो,

आपरेशन पूरा करने के बाद डॉ० लैंग ने हाथ के सहारे से मि० हटन को उठाकर बैठा दिया। उस समय उनको काफी कमजोरी अनुभव हो रही थी। तभी एक नर्स 'मिस माग्रेट' आयीं और उसने हाथ का सहारा देकर हटन महोदय को खड़ा कर दिया। चलते समय डॉ० लैंग ने कहा– 'मि० हटन, मैं आपकी बराबर सहायता करता रहूँगा और अपने सूक्ष्म शरीर से आपरेशन भी करता रहूँगा। आपकी नेत्र–ज्योति पुनः वापस आ जायेगी और आपका जीवन सुखमय बीतेगा, ऐसी मुझे पूरी आशा है।

मिस माग्रेट ने 'हटन' को कार में बैठा दिया। उस समय उन्हें कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था, परन्तु थोड़ी ही देर में धीरे–धीरे उन्हें सब कुछ स्पष्ट नजर आने लगा। वह प्रसन्नतापूर्वक अपने घर आ गए। बार–बार मि० हटन का हृदय प्रेतात्मा द्वारा की गयी अप्रत्याशित सहायता से भर आता था। इस विलक्षण घटना ने उनका जीवनक्रम ही बदल दिया।

सायकिक हीलिंग के ऐसे अनेकों घटनाक्रम हैं, जो बताते हैं कि

सहायक पितर आत्माएँ किसी उचित पात्र को अपना माध्यम बनाकर अपना परपीड़ा निवारण का दायित्व भली–भाँति निबाहती रहती हैं। ब्राजील के एक ऐसे ही चिकित्सक एरिगो का वृतान्त तो बहुचर्चित है, जिसकी सहायता से किसी जर्मन चिकित्सक की प्रेतात्मा शल्य चिकित्सा करती थी। फिलीपीन्स में भी ऐसे अनेकों "सायकिक हीलर" हैं, जिनके माध्यम से मरणोत्तर अवस्था में भी मृतात्माएँ सतत चिकित्सा में निरत रहती हैं।

फिलीपीन के ही एक सुप्रसिद्ध चिकित्सक थे टोनी एपगोआ, उनकी चिकित्सा प्रणाली इस युग के चिकित्सा शास्त्रियों को अचरज में डालती थी। वे उसे देखने जाते थे। उसकी प्रणाली देखते तो चकित रह जाते, पर समझ नहीं पाते कि इसका कारण क्या है और यह सब कैसे सम्भव होता है।

३७ वर्षीय टोनी चिकित्सा व्यवसाय करता था। मुख्य रूप से शल्य चिकित्सक था। ट्यूमर, कैन्सर, मोतियाबिन्द के ऑपरेशन करता और विकृत माद्दा शरीर में से निकाल कर बाहर रख देता। उसके पास न चाकू था, न कैंची, न सुई फिर भी ऑपरेशन करते रहना एक अद्भुत काम है, जो जादू जैसा प्रतीत होता। टोनी का अभी पिछले दिनों स्वर्गवास हो गया पर वह आजीवन बहुचर्चित रहा।

टोनी क्लेजन के कुवाओ इलाके में दो मंजिले मकान में रहता था। ऊपर अपने परिवार सहित खुद रहता, नीचे उसका अस्पताल था। विभिन्न रोगों से ग्रस्त ऑपरेशन योग्य रोगी ही उसके पास आते थे। उन्हें वह मेज पर लिटाता, मन्त्र पढ़ता तथा चाकू का काम उसका हाथ ही करता। काटने–फाड़ने चीड़ ने की क्रिया वह उँगली से करता था। ट्यूमर, केन्सर, गाँठ, मवाद आदि को भीतर से निकाल कर बाहर रख देता। इसके बाद वह बिना सुई के घाव को जोड़ देता। इस बीच उसका चचेरा भाई एल्फ्रेडो उसके साथ रहता था और तौलिया देने–चीजें उठाने जैसे काम करता रहता। थोड़ा खून तो निकलते देखा जाता पर

रोगी को दर्द जरा भी नहीं होता और ऑपरेशन ठीक से सम्पन्न हो जाता था। प्रतिदिन ऐसे १० से लेकर बीस तक ऑपरेशन उसे करने पड़ते थे। अनेकों असाध्य रोगी उसने ठीक किए। रोगियों की–प्रशंसकों की भीड़ उसे घेरे रहती थी। पहले वह फिलीपीन की राजधानी मनीला में रहता था। ख्याति के साथ–साथ भीड़ बढ़ी, तो उसने वह स्थान छोड़ दिया। नई जगह में उसने नाम का बोर्ड आदि कुछ नहीं लगाया, तो भी लोगों ने वहाँ का पता लगा लिया और रोगी वहाँ भी पहुँचते रहे। जो आधुनिक ऑपरेशनों से सम्भव है वह कर देने का दावा भी टोनी करता था। उसकी चिकित्सा विधि देखने डाक्टर वैज्ञानिक आते और सारे क्रिया–कृत्य के फोटो फिल्म ले जाते। पर इस निष्कर्ष पर कभी नहीं पहुँच पाए कि यह असम्भव दीखने वाली बात कैसे हो पाती है।

टोनी एप गोआ अपने इस कार्य का श्रेय किसी देवता को देता था। कहता था– 'उसका 'अद्‌भुत रक्षक' जो कराता है वह, वही करता है। ऑपरेशनों में वही उसके साथ रहता है और सहायता करता है।' इसके अतिरिक्त उस देवता के बारे में वह कुछ अधिक नहीं बताता, अंत तक यह रहस्य उसके साथ रहा।

मियामी फ्लोरिडा के वेल्क पेरा साइकोलोजी रिसर्च फाउण्डेशन के एक्र प्रतिनिधि वहाँ गये। यह सब देखा, क्रिया–कलाप के फोटो भी लाये, पर निष्कर्ष पर न पहुँच सके कि यह सब कैसे और क्यों सम्भव होता है?

वस्तुतः अदृश्य रूप में सहायक भूमिका निभाना पितर आत्माओं का स्वभाव है। अपना माध्यम किसी को भी बनाकर अपनी सदाशयता का परिचय देती रहती है।

सहायता के कई माध्यम–

एक भ्रान्ति यह संव्याप्त है कि मरणोत्तरजीवन में सभी प्राणी भूत–प्रेत बनते हैं और जिनके सम्पर्क में आते हैं, उन्हें डराने या दुःख

देने भर का कुकृत्य करते रहते हैं। ऐसी आत्माएँ भी होती तो हैं, पर उनमें से प्रायः निकृष्ट स्तर की होतीं और विक्षोभग्रस्त होकर मरी होती हैं। इसके विपरीत ऐसी दिवंगत पुण्यात्माएँ भी होती हैं, जो जिस प्रकार जीवन काल में सद्भाव प्रदर्शित करने में, उदार सेवा साधना में निरत रहीं, वैसा ही प्रयास वे मरने के उपरान्त भी करती रहती हैं। शरीर न रहने पर भी आत्मा का स्तर एवं रुझान मरणोत्तर जीवन में भी प्रायः वैसा ही बना रहता है। उदार मनःस्थिति के व्यक्ति मरणोत्तर स्थिति में जो संधि वेला चलती है, उसमें भी अपनी धरती पर की उदारमना प्रवृत्तियों में संलग्न रहते हैं, इसके कई उदाहरण मिलते हैं। इसके लिए कभी माध्यम स्वप्न बन जाते हैं, कभी परोक्ष निर्देश ही।

सन् १८८१ के मध्य में कैप्टन नीलकरी अपने दो बच्चों के साथ लारा जहाज को लेकर लीवरपूल से सान फ्रैन्सिस्को की ओर समुद्री लहरों के साथ आँख मिचौनी खेलते गन्तव्य की ओर बढ़ते चले जा रहे थे। मैक्सिको की पश्चिमी खाड़ी से १५०० मील पूर्व लारा में आग लग गई। कैप्टन नील अपने परिवार तथा ३२ अन्य जहाज कर्मियों के साथ जान बचाने के लिए लारा को छोड़कर तीन छोटी लाइफबोटों पर सवार हो गये।

लम्बी जलयात्रा तय करते हुए सभी व्यक्तियों को प्यास सताने लगी। दूर-दूर तक फैले अथाह समुद्र में पीने योग्य मीठे पानी का कहीं कोई चिन्ह नहीं दिखाई दे रहा था। प्यास के मारे ३६ सदस्यीय यात्रियों में से ६ जहाजकर्मी बेहोश हो गये।

कैप्टन करी को निद्रा आ गई और स्वप्न में देखा कि पास में कुछ दूरी पर समुद्र के छोटे से घेरे में हरा पानी कोई पादरी वेश धारी सन्त उसे बता रहा है जो पीने योग्य है। निद्रा भंग हुई और कैप्टन का जहाज हरे पानी पर तैर रहा था। थोड़ा-सा पानी एक बर्त्तन में लेकर कैप्टन ने पिया तो पाया कि स्वप्न में देखे पानी से अधिक मीठा एवं स्वच्छ जल था। सभी ने पानी पिया और जीवन की सुरक्षा की। कैप्टन

नील ने इसे एक समुद्री नखलिस्तान की संज्ञा दी यह कैसे किस प्रकार उन्हें उपलब्ध हुआ कौन वह पादरी था, व कैसे सहायता हेतु आया इसकी पूर्वापर संगति बिठा सकने में कोई समर्थ नहीं था।

ऐसे अनुदान कभी–कभी किन्हीं को अनायास भी मिल जाते हैं, यह अपवादों की बात हुई। उनके पीछे निश्चित आधार यह है, कि मनुष्य अपने व्यक्तित्व को वैसा बनाये जैसा देव वर्ग को प्रिय है।

अनेक सिद्ध पुरुष अपने दूरस्थ शिष्यों को अपनी सूक्ष्म सत्ता से प्रत्यक्ष मदद पहुँचाते हैं। प्रसिद्ध आर्य समाजी सन्त स्व० श्री आनन्द स्वामी के पुत्र लेखक–पत्रकार श्री रणवीर ने कुछ समय पहले अपने संस्मरण–लेख में यह बताया था कि किसी प्रकार उनके पिता ने उन दिनों, जबकि वे जीवित थे और भारत में थे तथा रणवीर विदेश में प्रवास पर थे, एक बार भयानक खड्डे में गिर पड़ने से चेतावनी देकर उन्हें रोका था। अन्य कई अवसरों पर भी उनकी मदद व मार्गदर्शन का कार्य उनके पिता ने किया था। जबकि वे उस समय उनसे सैंकड़ों मील दूर हुआ करते थे।

विकसित आत्म सामर्थ्य के ये लाभ सिद्ध पुरुषों द्वारा आत्मीय जनों को अनायास ही पहुँचाए जाते रहते हैं। यही स्थिति पितरों की है। ऐसी शरीरी–अशरीरी उच्च आत्माओं के प्रति श्रद्धा–भाव रखना उचित भी है और आवश्यक भी।

अधिक उच्चकोटि की पितर आत्माएँ तो जीवित महामानवों–महायोगियों की तरह ही उदात्त होती हैं। उनके लिए अपने–पराए जैसा कोई भेदभाव होता ही नहीं। जहाँ भी आवश्यकता एवं पात्रता दिखी, वहीं उनके अनुग्रह–अनुदान बरसने लगते हैं। जरूरत उनके अनुकूल बनने उत्कृष्ट जीवन और प्रगाढ़ श्रद्धा–भाव अपनाने से होती है।

मृत्यु के बाद भी जीवन का अस्तित्व बना रहता है। परिपक्व मृत्यु होने पर चेतना कुछ समय के लिए विश्राम में चली जाती है। जिस

प्रकार दिन भर का थका माँदा व्यक्ति प्रगाढ़ निद्रा में सो लेता है तो उसे फिर से नयी ताजगी मिल जाती है, उसी प्रकार मृत्यु के बाद जीव की अवस्था के अनुरूप वह दो माह से दो वर्ष तक विश्राम ले लेने के पश्चात् नया जन्म धारण कर लेता है। पर कई बार नींद पूरी तरह नहीं आती। अफीमची और शराबी लोगों की नींद उखड़ी उखड़ी होती है, ऐसे लोगों को मृत्यु के समय भी पूरी नींद नहीं आती और वे नया जन्म लेने पर भी थके–थके से अस्त–व्यस्त होते है। जिन्हें नींद पूरी आ जाती है और जिनके मन शुद्ध और पवित्र होते हैं, वे अन्य जन्मों में बाल्यावस्था से ही पूर्व जन्मों की स्मृतियाँ दोहराने लगते हैं।

जिनकी इन्द्रिय वासनाएँ प्रबल होती हैं या जिनकी मृत्यु हत्या या आत्महत्या जैसी होती है वे एक प्रकार से निचोड़े गये शहद की भाँति होते हैं। शहद का छत्ता काटकर रख दिया जाये तो उसका शहद अपने आप टपक आता है। वह नितान्त शुद्ध होता है पर निचोड़े जाने पर उसमें मोम आदि का अंश भी आ जाता है, उसी प्रकार ऐसी मृत्युओं में स्थूल अवयव भी बने रहते है ऐसी ही आत्माएँ प्रेत, पिशाच, भूत, बैताल, किन्नर और यक्ष होते हैं। यह मरघट अपने शवों तथा जिनके प्रति उनकी स्वाभाविक आसक्ति होती है, उनके पास घूमते आते जाते भी रहते हैं, पर जिनके शरीर में आग्नेय–अणु अधिक होते हैं उनके पास इस तरह की गन्दी आत्मायें नहीं जा पाती हैं और जब नींद टूटती है तो वे अपनी आसक्ति के अनुरूप निम्न गामी योनियों में चले जाते हैं।

विश्राम के बाद देव आत्मायें या जिनकी गति ऊर्ध्वमुखी–अच्छे कामों में रही होती है जिनके शरीरों का आणविक विकास प्रकाश पूर्ण हो गया होता है, वे दिव्य लोगों को चली जाती हैं और जब तक वहाँ रहने की इच्छा होती है तब तक रहती हैं। पीछे इच्छानुसार अच्छे घरों में जन्म लेकर लोकसेवा पुण्य परमार्थ और नेतृत्व आदि उत्तरदायित्व सम्भालती हैं पर जिनका मन अशुभ संस्कारों वाला रहा होता हैं वे अधोगामी लोकों में रहकर निम्नगामी योनियों में चले जाते हैं। इस

प्रकार संसार में गुण कर्म का यह प्रवाह, प्रकृति की जटिलता के समान स्वयं भी जटिल रूप में चलता रहता है।

पितर आत्माएँ वे हैं जिनकी ऊर्ध्वमुखी गति होती है। वे कई बार विश्राम की अवधि में कुछ लम्बे समय तक भी रही आती हैं। उस अवधि में वे स्वयं तो प्रकाशपूर्ण वातावरण में रहते ही हैं, दूसरे स्वजनों या जिनके प्रति उनके मन में आकर्षण होता है, उनको भी समय–समय पर प्रकाशपूर्ण मार्गदर्शन एवं अनुग्रह–अनुदान देते रहते हैं।

पितरों का ममत्व भरा मार्गदर्शन–

श्री लेडबीटर ने अपनी पुस्तक "इनविजिबुल हेल्पर्स" में लंदन के पादरी डॉ० जान मेसन नील के एक संस्मरण में बताया है कि एक महिला अपने दो बच्चे छोड़कर मर गई। कुछ दिनों बाद उसका पति बच्चों के साथ अपने एक मित्र के घर घूमने गया। दोनों दोस्त गपशप में मशगूल हो गये। बच्चे खेलने लगे।

खेलते–खेलते बच्चे उस मकान के एक उपेक्षित कोने की सीढ़ियों पर जा पहुँचे। वे सीढ़ियाँ तहखाने को जाती थीं। बच्चे नीचे उतर रहे थे, तभी उन्हें उनकी माँ आती दिखी। माँ ने उनसे कहा कि 'वहाँ नहीं जाओ। चलो, ऊपर चलो।' माँ की बात सुनकर वे लौट कर ऊपर आए। तब तक उन दोनों मित्रों का ध्यान इस बात की ओर जा चुका था। बच्चों के पिता के मित्र घबड़ा उठे कि मित्र के बच्चे कहीं तहखाने की तरफ तो नहीं गए। वे लोग उधर लपके तो बच्चे सीढ़ियों पर मिले। तहखाने में एक कुंआ था। सीढ़ियाँ उसी तक जाती थीं। बच्चे उनमें उतरते चले जाते तो कुंए में गिर सकते थे और तब प्राण गँवा बैठते। इसलिए मित्र घबड़ाते हुए दौड़ से पड़े। बच्चों ने बताया 'अभी–अभी माँ मिली थी। उसी ने ऊपर आने को कहा था। फिर जाने कहाँ चली गयीं।'

यह सदाशयी आत्माओं द्वारा अपने आत्मीयों के मार्गदर्शन करने

उनके ऊपर अपनी आत्मीयता पूर्ण छाया बनाए रखने के उदाहरण हैं। ऐसी हजारों प्रामाणिक घटनाएँ देखी तथा लिपिबद्ध की जा चुकी हैं, जो मरणोपरान्त जीवन का तथा उस अवधि में भी उदार आत्माओं द्वारा आत्माओं के संरक्षण–पथ प्रदर्शन का विवरण प्रस्तुत करती हैं।

आइओवा नगर में रहने वाले एक किसान श्री मिकाइल कौनले की मृत्यु हो गयी। मिकाइल बड़ा सम्पन्न व्यक्ति था, पर वह हमेशा गन्दे कपड़े पहनता था। उसकी मृत्यु भी गन्दे कपड़ों में ही हुई। एक कमीज, जो महीनों से नहीं धोई गई थी, पहने उसकी संदिग्ध अवस्था में मृत्यु हो गई। इस मृत्यु की जाँच करने वाले अफसर ने शव को देखकर कहा इसके पुराने कपड़े तो यहीं, मुर्दाघर में फेंक दिये जायें और इसे साफ कपड़ा पहनाकर मेरे घर भेज दिया जाये। किसान के बेटे ने ऐसा ही किया। सफेद कपड़े पहनाकर लाश अफसर के घर भेज दी गई। लड़का जैसे ही अपने घर लौटा कि अपनी बहन बेहोश पाई। काफी देर बाद होश में आने पर उसने बताया "मैंने अभी–अभी पिताजी को साफ कपड़ों में देखा। वैसे कपड़े वे कभी नहीं पहनते थे। वे मुझसे कह रहे थे कि मेरी पुरानी कमीज मुर्दाघर में पड़ी है उसमें कुछ बिल और रुपये हैं।

लड़की के इस बयान को घर और पड़ौस वालों ने भी तब तो बकवास कहा पर जब लड़के ने बताया कि हाँ सचमुच ही उनके पुराने कपड़े उतरवा कर मुर्दाघर में फिकवा दिये गये हैं तो लोगों की आतुरता भी बढ़ी लोग मुर्दाघर गये। कमीज उठाकर देखी गई उसमें भीतर बड़ी सावधानी से एक थैली सिली हुई थी, उसमें बिल भी थे और रुपये भी। इस घटना से सभी आश्चर्यचकित रह गये और वहाँ उपस्थित सभी लोगों ने माना कि मृत्यु के पश्चात् भी चेतना अपनी बौद्धिक क्षमता के साथ जीवित रहती है तथा आत्मीयों से सम्पर्क कर उन्हें आवश्यक सूचनाएँ देकर लाभ पहुँचाती है।

ये पितर आत्माएँ अपने स्वजन आत्मीयों से अनुराग आकर्षण तो

रखती हैं; किन्तु हीनता–दुष्टता से मुक्त होने के कारण उनका यह अनुराग भोग–वासना परक नहीं, अपितु सहायता परक होता है।

भोग के लिए उत्सुक वासना की आग से उत्तप्त मृतात्माएँ तो स्वजनों को अपनी छिछोरी चेष्टाओं से आतंकित करती और उनकी चेतना पर दबाव डालकर उन्हें अनुचित क्रिया कलापों के लिए बाध्य करती देखी जाती हैं। ये दुरात्माएँ कुत्सित दुरभिलाषाएँ भी पालती हैं कि हमारा अमुक प्रियजन रुग्ण होकर मर जाए और अकालमृत्यु तथा प्रेत–आवेश के कारण हमारी ही बिरादरी में खिंच आए, तो हम गर्हित वासना–भोग की कल्पनाएँ साथ–साथ कर सकें।

सत्संस्कार–सम्पन्न पितर–आत्माएँ भी आत्मीयों से सम्पर्क की इच्छुक रहती हैं, किन्तु उनका उद्देश्य भूतों से सर्वथा विपरीत रहता है। वे सत्परामर्श एवं विवेक पूर्ण मार्गदर्शन देकर सच्चे सात्विक अनुराग का परिचय देती रहती हैं।

जन्म जन्मान्तरों से जुड़ी सहायक पितर सत्ताएँ–

स्काटलैण्ड के सेन्ट कुर्री नामक गाँव में एक बालक जन्मा डेनियल डगलस होम। पिता दरिद्र और बालक रोगी, बच्चे को चाची ने पाला। चौदह वर्ष की उम्र तक वह तरह–तरह की बीमारियों में ग्रसित रह कर ऐसे ही दिन काटता रहा। इसी बीच उसे यह अनुभव होता रहा, कोई प्रेतात्मा उससे सम्बन्ध बनाती है और तरह–तरह के सन्देश पहुँचाती है। डरते–डरते उसने वे संकेत घर वालों और पड़ोसियों को बताये। पूर्व सूचनायें जब सही निकलीं, तो उनका विश्वास बढ़ता गया और अमुक समस्या का हल प्रेतात्माओं से पूछकर बताने के लिए उसका उपयोग किया जाने लगा। जो परामर्श मिलते उनमें से अधिकांश बहुत ही उपयोगी महत्त्वपूर्ण और अप्रत्याशित होते थे।

जब भूत–प्रेत की बात अधिक फैली, तो चाची डर गई और उसने झंझट भरे होम को घर से निकाल दिया। वहाँ से वह इंग्लैण्ड चला

गया। अपनी शारीरिक रुग्णता की चिकित्सा कराने के सिलसिले में उसका सम्पर्क डॉ० काक्स से हुआ। वे आध्यात्मवादी थे, उनने न केवल रुचिपूर्वक इलाज ही किया, वरन् लड़के की आत्मिक शक्ति को बढ़ाने में भी सहायता की।, ताकि वह परलोक की आत्माओं से अधिक अच्छा सम्बन्ध बना सकने में समर्थ हो सके। इस साधना से उसे आश्चर्यजनक सफलता मिली। उसे प्रेतात्माओं का प्रामाणिक सन्देश वाहक माना जाने लगा। इस सन्दर्भ में इंग्लैण्ड के उच्चकोटि के व्यक्ति उससे अपना समाधान कराने के लिए मिलने आये और सन्तुष्ट होकर लौटे। इन ख्यातिनामा लोगों में ईविनिंग पोस्ट के सम्पादक विलियम कुलेन ब्रामेट, प्रख्यात उपन्यासकार मिलियम थेकर, प्रसिद्ध रसायन विज्ञानी सर क्रुक्स जैसे मूर्धन्य लोगों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उसकी विलक्षण प्रतिभा के सम्बन्ध में पत्र–पत्रिकाओं में कितने ही लेख घटनाक्रम के विवरणों सहित प्रकाशित हुए।

स्वर्गीय सम्राट् नैपोलियन का एक सन्देश लेकर वह २७ फरवरी १८६० को सम्राट् से मिला। सम्राज्ञी युजीन तो उन अद्भुत किन्तु यथार्थ सन्देशों से इतनी प्रभावित हुई कि पुरस्कार में होम को लाखों रुपये के बहुमूल्य उपहार दे डाले।

होम के पूर्वजन्म की पत्नी रूस में जन्मी थी। वह उसी से विवाह करना चाहता था। यह कठिन था, क्योंकि वह लड़की रूस के शाही जनरल क्रोल की इकलौती पुत्री थी। इतने प्रतिष्ठित और सम्पन्न पिता की सुशिक्षित पुत्री एक बीमार और प्रेत व्यवसाय का उपहासास्पद धन्धा करने वाले के साथ कैसे ब्याही जा सकती थी। विशेषतया ऐसी दशा में जबकि दोनों एक दूसरे से परिचित भी नहीं थे और सुदूर देशों में रहते थे। यह कठिन कार्य काउण्ट आफ मांट क्रिसी के प्रसिद्ध उपन्यासकार ड्यूमा ने अपने कन्धों पर लिया। उनने सन्देशवाहक की सफल भूमिका निभाई और अन्ततः ८ अगस्त १८६० को दोनों का विवाह हो गया। दोनों ने मिलकर प्रेत विद्या के शोध कार्य को और भी आगे बढ़ाया।

होम १ जून १८८६ को मरा। इससे पूर्व वह अपने प्रेतात्माओं के अनुभव सन्दर्भ में एक खोजपूर्ण पुस्तक प्रकाशित करा चुका था' 'लाइट्स एण्ड शैडोज आफ स्प्रिचुअलिज्म' इस पुस्तक की भारी खपत हुई थी और होम को अच्छी कमाई हुई थी। मृत्यु के समय उसकी पत्नी सिरहाने बैठी रो रही थी। होम ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा—पगली, मैं मर कहाँ रहा हूँ, शरीर छूट जाने पर मैं तेरे साथ बराबर सम्पर्क बनाये रहूँगा। आत्मा और कला कहीं मरा करती हैं।

मृतात्मा से सम्बन्ध बनाने का एक और बहु प्रसिद्ध प्रसंग साहित्यकार जार्ज बर्नाड शा से सम्बन्धित है।

ब्रिटिश कस्बे गलोसेस्ट—शायर में रहने वाले छियालीस वर्षीया पैट्रिशिया मूलतः कनाडा की रहने वाली एक लेखिका हैं। उनका कहना है कि कई वर्ष पूर्व वे महान् नाटककार जार्ज बर्नाडशा से आयरलैण्ड की किर्लानी झील के तट पर एक होटल में एक कमरे में मिलीं थीं और दोनों में प्यार हो गया। बर्नाडशा अपनी मृत्यु के बाद भी प्रतिदिन रात में मेरे कमरे में आकर मुझसे मिलते हैं। मृत्यु के उपरान्त पहली राते जब शॉ की आत्मा आई तो दोनों ने एक वर्णमाला तैयार कर ली। उसी के आधार पर दोनों में बाते होती हैं। पेट्रिशिया जार्ज बर्नाडशा को 'बर्नी' कहती है। उसके अनुसार बर्नी ने उन्हें एक अँगूठी विवाह की रस्म पर दी थी। यह 'विवाह' बर्नाडशा की मृत्यु के बाद हुआ। वह अँगूठी पेट्रिशिया की हथेली पर हरदम चमचमाती रहती है। पेट्रिशिया के एक बच्चा भी है, जिसे वह शा यानी अपने बर्नी का बताती है। हालांकि जार्ज बर्नाडशा की मृत्यु के १० वर्ष बाद यह बच्चा हुआ है।

पेट्रिश्यिा के अनुसार वह इन दिनों जो कुछ भी साहित्य लिख रही हैं वह बर्नी की ही प्रेरणा से। उसके कमरे में जार्ज बर्नाडशा की एक बड़ी तस्वीर है। मकान में इस युग में भी कभी बिजली नहीं जलती पुराने लैम्प टिमटिमाते हैं। शेष भाग घने अन्धकार में लिपटे रहते हैं। एकान्त में यह अकसर अदृश्य 'बर्नी' से बातें करने लगती हैं। उनके

साहित्य को देखकर उनकी बात पर अविश्वास भी नहीं होता।

दैवी सहायता परोक्ष मार्गदर्शन–

थियोसाफी के जाने माने परोक्ष विद्या के अन्वेषणकर्त्ता सी०डब्ल्यू० लेडवीटर आजीवन मरणोत्तर जीवन पर अनुसंधान में निरत रहे। अपने शोध ग्रन्थों में उन्होंने लिखा है कि– उच्चतर लोकों में क्रियाशील अशरीरी पितर–सत्ताएँ जब मनुष्यों को देखती हैं, तो वे उन्हें अस्थिमोस के पिण्ड में कैद हो गया देखकर दुःखी भी होती हैं, करुणाभिभूत सामान्य जन मृत व्यक्ति को सुख–आनन्द से वञ्चित है, ऐसा मान बैठता है, जब कि अपने संकीर्णताओं में घिरा शरीरधारी मानव ही सहज आंनद से वञ्चित हैं। ऐसे वञ्चितों में से जो भी आनन्दपूर्ण प्रकाश की दिशा में बढ़ते हैं, या जिनमें भी बढ़ने की सम्भावना होती है, अथवा जो कषाय–कल्मषों से अधिक लिप्त नहीं होते, उनको सहायता देने के लिए वे पितर–सत्ताएँ सदैव जागरूक रहती हैं। निर्दोष बच्चों तथा सज्जनवृत्ति के लोगों को संकट के समय में ये पितर–सत्ताएँ आकस्मिक सहायता प्रदान करती हैं और विपत्तियों के पहाड़ के नीचे दबने पर भी बालबाँका नहीं होता। इन पितर–सत्ताओं की करुणा और शक्ति के परिचय–प्रमाण देने वाली घटनाएँ आये दिन बड़ी संख्या में देखी सुनी जाती हैं।

श्री लेडवीटर ने ऐसे अनेकों उदाहरण और अनुभव प्रस्तुत किए हैं–

'एक बार लन्दन की हालबर्न सड़क में भयंकर आग लग गई। उसमें दो मकान जलकर राख हो गये। उस घर में एक बुढ़िया को जो धुएँ के कारण दम घुट जाने से पहले ही मर गई थी, को छोड़कर शेष सबको बचा लिया गया। आग इतनी भयंकर लगी कि कोई भी सामान नहीं निकाला जा सका।"

"जिस समय दोनों मकान लगभग पूरे जल चुके थे, तब घर की मालकिन को याद आया कि उसकी एक मित्र अपने बच्चे को एक रात

के लिये उसके पास छोड़कर किसी कार्यवश कालचेस्टर चली गई थी। वह बच्चा अटारी पर सुला गयी थी और वह स्थान इस समय पूरी तरह आग की लपटों से घिरा हुआ था, आग की गर्मी से उस समय पत्थर भी मोम की तरह पिघल कर टपक रहे थे।"

"ऐसी स्थिति में बच्चे के जीवन की आशा करना ही व्यर्थ था, फिर उसकी खोज करने कौन जाता। पर एक आग बुझाने वाले ने साहस साधा, उपकरण बाँधे और उस कमरे में जा पहुँचा, जहाँ बच्चा लिटाया गया था। उस समय तक फर्श का बहुत भाग जलकर गिर गया था, किन्तु आग कमरे में गोलाई खाकर अस्वाभाविक और समझ में न आने वाले ढंग से खिड़की की तरफ निकल गई थी। उस गोल सुरक्षित स्थान में बच्चा ऐसे लेटा था, जैसे कोई अपनी माँ की गोद में लेटा हो। बाहर का दृश्य देखकर भयभीत होना अवश्यक था, पर उसकी तरफ एक भी आग की चिन्गारी बढ़ने का साहस न कर रही थी। जिस कोने पर वह बच्चा सोया था, वह बिलकुल बच गया था, जिस पटिये पर खाट थी, वह आधे–आधे जल गये थे पर चारपाई के आसपास कोई आग न थी, वरन् एक प्रकार का दिव्य तेज वहाँ भर रहा था। जब तक आग बुझाने वाले ने बच्चे को सकुशल उठा नहीं लिया, वह प्रकाश अपनी दिव्य प्रभा बिखेरता रहा पर जैसे ही वह बच्चे को लेकर पीछे मुड़ा कि आग वहाँ भी फैल गई और दिव्य तेज अदृश्य हो गया।

वर्किंघम शायर में बर्नहालवीयो के निकट हुई, एक घटना में इस तरह का दैवी हस्तक्षेप लगभग एक घण्टे तक दृश्यमान् रहा। एक किसान अपने खेत पर काम कर रहा था। उसके दो छोटे–छोटे बच्चे भी थे, जो पेड़ के नीचे छाया में खेल रहे थे। किसान को ध्यान रहा नहीं। दोनों बालक खेलते–खेलते जंगल में दूर तक चले गये और रात्रि के अंधेरे में भटक गये।

इधर किसान जब घर पहुँचा और बच्चे न दिखाई दिये, तो चारों तरफ खोज हुई। परिवार और पड़ौस के अनेक लोग उस खेत के पास

गये, जहाँ से बच्चे खोये थे। वहाँ आकर सब देखते हैं कि दीप–शिखा के आकार का एक अत्यन्त दिव्य नीला प्रकाश बिना किसी माध्यम के जल रहा है, फिर वह प्रकाश सड़क की ओर बढ़ा, यह लोग उसके पीछे अनुसरण करते चले गये। प्रकाश मन्दगति से चलता हुआ, उस जंगल में प्रविष्ट हुआ जहाँ एक वृक्ष के नीचे दोनों बच्चे सकुशल सोये हुए थे। माँ–बाप ने जैसे ही बच्चों को गोदी में उठाया कि प्रकाश अदृश्य हो गया।

मात्र संयोग कहकर इन प्रसंगों को नकारा नहीं जा सकता–

अदृश्य दैवी सत्ताएँ सदैव परहित हेतु उद्यत रहती हैं। कई घटनाक्रम ऐसे घटते हैं कि हमें उनका कोई भी कारण समझ में नहीं आता। कैसे कोई भयंकर विपदा में भी बचकर निकलकर आ सका, इसका कोई विज्ञान सम्मत समाधान नहीं दिया जा सकता। यदि कोई उत्तर मिलता है तो आत्मिकी की भाषा में परोक्ष जगत् की सत्ता को स्वीकार करके ही।

लीसवे का समुद्री प्रकाश स्तम्भ आजकल जहाँ खड़ा है, वहाँ किसी जमाने में जहाजों के लिए भारी खतरा था। उस उथलेपन में फँसकर अनेकों जलयान या तो नष्ट हो जाते थे या क्षतिग्रस्त। उस स्थान पर प्रकाश स्तम्भ खड़ा करना भी सम्भव नहीं हो रहा था; क्योंकि वहाँ की जमीन बालू की थी।

सन् १७७१ में एक जहाजी दुर्घटना हुई। एक रुई से लदा अमेरिकी जहाज–दुर्भाग्य का शिकार होकर उसी दलदल में फंसकर नष्ट हो गया। कुछ विचित्र संयोग ऐसा हुआ कि रुई, बालू और उस जल के विचित्र सम्मिश्रण से वह रुई पत्थर जैसी कठोर हो गई। फलस्वरूप उसी की नींव पर प्रकाश स्तम्भ खड़ा किया गया, जिससे भविष्य में उस क्षेत्र में जहाज नष्ट होने की आशंका समाप्त हो गई। उस एक जहाज

के डूबने से जो प्रकाश स्तम्भ बना, उसके कारण अमेरिकी जहाज भविष्य के लिये उस तरह की दुर्घटना के शिकार होने से सदा के लिए बच गये और अन्य यानों को भी उस तरह के संकट से छुटकारा मिल गया। अभिशाप को वरदान में बदलने वाली दुर्घटना यह आशा दिलाती है कि किसी अनिष्ट के पीछे मंगल भी छिपा हो सकता है। तत्त्ववेत्ताओं का मत है कि बहुत सम्भव उदार अशरीरी आत्माओं ने ही दुर्घटनाग्रस्त जलयानों की क्षति से लोगों को बचाने के लिए इस रीति से रास्ता बनाया हो।

बिहार में १७३६ में जोरदार भूकम्प आया। कई दिन तक रह रहकर पृथ्वी काँपी और जब स्थिर हुई तब पता चला कि नगर के नगर ध्वस्त हो चुके हैं। हजारों व्यक्तियों की जानें गईं इस दुर्घटना में। मुंगेर नगर में उस दिन बाजार था। दोपहर का समय था हजारों व्यक्ति क्रय–विक्रय करने में तल्लीन थे, तभी आया भूचाल और उन हजारों दुकानदारों तथा खरीददारों को मकानों के मलबे में दाब कर चला गया।

पीछे आये सहायता दल सिपाही–सैनिक और समाजसेवी संस्थायें। मलवे की खुदाई प्रारम्भ हुई। एक दो दिन तक तो कुछ लोग जीवित कुछ चोट खाये निकलते रहे पर तीसरे दिन जो लाशें निकलनीं शुरू हुईं, तो फिर पन्द्रह दिन तक लाशें ही निकलती रहीं, ढेर लग गया मृतकों का।

गिरे हुए मकानों का मलवा निकालने का काम अभी तक बराबर चल रहा था। काम एक स्थान पर चल रहा था कि एकाएक कुछ लोग चौंके, क्योंकि नीचें से आवाज आ रही थी– 'थोड़ा धीरे से खोदना।'' १५ दिन तक जमीन में दबे रहने पर भी यह कौन जीवित पड़ा है, इस आश्चर्य और विस्मय से सभी का मन भर गया। सावधानी से मिट्टी हटाई जाने लगी।

कई बड़ी–बड़ी धन्नियाँ तथा शहतीरें निकालने के बाद निकला एक अधेड़ आयु का व्यक्ति केले के छिलके में पड़ा हुआ, एक भी चोट या

खरोंच नहीं थी। सबसे आश्चर्य भरी बात तो यह थी कि ढेर सारी मिट्टी और तख्तों के नीचे दबे उस आदमी ने बिना खाये, पिये, साँस लिये १५ दिन कैसे काट दिये। उसी से पूछा गया—भाई तुम कैसे बच निकले, तो उसने आप–बीती घटना इस प्रकार सुनाई—

"मैं आया था—केले बेचने। इस मकान की दालान के नीचे सिर पर टोकरी रखे खड़ा था, कि भूचाल आ गया। छत टूट कर ऊपर आ गिरी मैं दब गया। टोकरी कुछ इस प्रकार उल्टी कि सारे केले उसके नीचे आ गये और इस तरह से पिचकने या सड़ने गलने से बच गये। इसी में से निकाल–निकाल कर केले खाता रहा।"

'पेट के नीचे का भाग कुछ इंस तरह मिट्टी से पट गया कि शिरो भाग से कमर भाग का समबन्ध ही टूट गया। टट्टी पेशाब की बदबू से इस प्रकार बचाव हो गया। एक बार पृथ्वी फिर हिली और उसके साथ ही हिला यहमलवा, न जाने कैसे एक सूराख हो गया वह हलकी सी धूप की गर्मी देता रहा और शुद्ध हवा भी। अब जीते रहने के लिए एक ही वस्तु आवश्यक रह गई थी वह थी पानी। दैवयोग से पृथ्वी तिबारा काँपी तब इस दुका॰ का फर्श टूटा और उसके साथ ही पानी की एक लहर इधर आ गई और इस गड्ढ़े को पानी से ऊपर तक भर गई। हवा और धूप यों छेद से मिल गये। केले पास थे ही, पानी भी परमात्मा ने भेज दिया। यह सब व्यवस्थायें भगवान् ने जुटा दी हैं, मुझे विश्वास हो गया कि मुझे अभी नहीं मरना।

'इसी विश्वास के सहारे आज तक जीवित रहा। आज का दिन आखिरी दिन है जबकि सब केले समाप्त हो गये हैं, पानी नहीं बचा है, रोशनी भी नहीं आ रही थी पर आप सब लोग आ गये सो मैं आप लोगों को भगवान् की मदद ही मानता हूँ।' इतना कहकर उसने कृतज्ञता की दो बूँदे आँखों से लुढ़का दी।

अभी–अभी मेक्सिको में आए भूकम्प (सित०–अक्टूबर ८५) में भी ऐसे ही १३ मंजिली एक होटल के दबे मलबे में से दो नवजात शिशुओं के

जीवित बच निकलने का समाचार मिला था। जहाँ पैंतीस हजार से भी अधिक व्यक्तियों (अनधिकृत आँकड़ों के अनुसार) के मरने का अनुमान हो, वहाँ ऐसे प्रसंग मात्र संयोग नहीं कहे जा सकते। यह प्रसंग लगभग वैसे ही हैं जैसे महाभारत के युद्ध में एक हाथी के घंटे के नीचे से उत्तंग ऋषि द्वारा टिटहरी के अण्डे निकाले गए थे, जो उस महान् विनाश में भी बच गए थे। वस्तुतः ये घटना प्रसंग बताते हैं कि अदृश्य सत्ताएँ पीड़ितों की मदद के लिए, सत्पारायण व्यक्तियों की सहायता हेतु अथवा अपनी ममता के नाते रक्षा करने सदैव आगे आती हैं।

एक घटना इंग्लैण्ड की हैं वेल्स की मुख्य सड़क से २२ वर्षीया युवती पैपिटा हैरिसन अपने पिता के जन्म दिवस समारोह में भाग लेने लन्दन जा रही थी। अचानक उसकी कार एक बर्फ की चट्टान से टकरा गई, फिर एक दीवार तोड़कर एक खेत में घुस गई। दुर्भाग्य से खेत ढलान पर था, कार वहाँ से लुढ़की और ८० फुट गहरा जल पात था, कार उसमें जा गिरी, इस बीच वह डूबने से बचने के लिए प्रयत्न करने लगी तो ऐसा जान पड़ा, किसी ने हाथ पकड़ कर ऊपर उठा लिया हो। अन्ततः वह स्वतः जीवित ऊपर निकल आयी।

अदृश्य शक्तियों का परोक्ष सहयोग—

सूक्ष्म रूप में विचरण करती आत्माएँ अदृश्य रूप में सदा सहयोग देती हैं। उन परिस्थितियों में जब मनुष्य का प्रयत्न, पुरुषार्थ एवं शक्ति अपना बचाव कर सकने में भी असमर्थ सिद्ध होती है, अन्तःकरण में दिव्य प्रेरणा के रूप में उनकी अनुकम्पा बरसती दिखाई देती है। ये दिव्य शक्तियों की परोक्ष प्रेरणा अन्तःकरण की स्फुरणा के रूप में परिलक्षित होती हैं। कभी—कभी तो प्रत्यक्ष माध्यम से भी उनका सहयोग दिखायी पड़ता है।

राजस्थान प्रान्त के जैसलमेर के पश्चिमी रेगिस्तानी इलाके में अनेकों प्रकार के खतरनाक सर्प पाये जाते हैं। उनमें सबसे भयंकर तथा विषधर सर्प है 'पीना'। कहते हैं कि यह सर्प रात को निकलता है तथा

सोये हुए आदमी के सीने पर सवार हो जाता है। नाक के समीप सटकर मनुष्य द्वारा छोड़ी गई साँस को पीता है और अपनी जहरीली साँस छोड़ता है। उसकी साँस इतनी विषैली होती है कि साँप के चले जाने के बाद उस आदमी के गले में जहरीला फोड़ा हो जाता है। कुछ दिनों में फोड़े के फटते ही आदमी की भी मृत्यु हो जाती है।

इस सर्प की चमड़ी रबड़ जैसी होती है तथा लाठियों के प्रहार से भी नहीं मरता। सूर्य के प्रकाश में यह अन्धा हो जाता है। अमरीकी संग्रहालयों में भी पीना सर्प रखा गया है।

६ नवम्बर १९७८ को जैसलमेर के भैरव ग्राम में एक ऐसी ही घटना घटित हुई जो अदृश्य सत्ता के प्रत्यक्ष सहयोग का प्रमाण देती है। उक्त गाँव के एक सहायक कृषि अधिकारी सरकारी फार्म में कार्यरत थे। हनुमान् जी के वे परम भक्त थे। ईश्वर के प्रति उन की अटूट आस्था थी। एक दिन अपने फार्म का निरीक्षण करते घूम रहे थे। पेड़ पर उन्होंने देखा कुछ बन्दर उछल–कूद मचा रहे थे। यकायक बन्दरों के पास से निकलते हुए एक आवाज सुनाई दी 'साँप से बचना।' चौंक कर उन्होंने ऊपर देखा; किन्तु कुछ नहीं दिखायी दिया। एक बन्दर अवश्य पेड़ पर बैठा था। अधिकारी ने मन का भ्रम समझकर भुलाने की चेष्टा की; किन्तु उस चेतावनी का डर तो बना ही रहा।

रात्रि को जब अधिकारी महोदय सोने का प्रयास कर रहे थे। इसी बीच उन्हें अपने शरीर पर कुछ रेंगती हुई चीज मालूम पड़ी। तेजी से बिस्तर से उठ खड़े हुए रेंगती हुई चीज नीचे पड़ी। बगल में रखी टार्च जलाकर देखा तो सर्प था। बचाने के लिए चिल्लाने पर फार्म में सोये अन्य कर्मचारी पहुँच गये। लाठियों से सर्प पर बारम्बार प्रहार किया गया; किन्तु आश्चर्य की सर्प नहीं मरा। कुछ लोग इस विचित्र सर्प से पूर्व से ही परिचित थे। उन्होंने बताया यह पीना सर्प है जो लाठियों से नहीं मरता। तत्पश्चात् भाले–बल्लम के प्रहार से सर्प मर गया। सर्प की मोटाई ३।। इंच तथा लम्बाई सवा पाँच फुट थी। वजन इसका १.३ किलो पाया गया।

ईश्वर की विशिष्ट कृपा का वर्णन करते उक्त अधिकारी महोदय ने सारी घटना एवं अदृश्य चेतावनी की बात सभी को बतायी। उन्होंने कहा कि दी गई चेतावनी के कारण ही मुझे नींद नहीं आ रही थी। यदि सो जाता, तो सर्प के जहर से बचना असम्भव था।

कहा जाता है मानवी चेतना प्रत्येक परिस्थितियों एवं घटनाओं से जूझने में समर्थ है; किन्तु यह बात प्रत्यक्ष दिखायी देने वाली घटनाओं के सन्दर्भ में ही लागू होती है। कुछ घटनाएँ ऐसी होती हैं जिनके विषय में कुछ भी जानकारी नहीं होती है अथवा कुछ परिस्थितियाँ ही ऐसी आ खड़ी होती है, जिनमें जीवन--सुरक्षा असम्भव जान पड़ती है। ऐसे विशिष्ट अवसरों पर जब मनुष्य असहाय एवं असमर्थ होता है, एकमात्र आसरा उस परमात्मा का ही रहता है। देखा यह जाता है कि इन असहाय परिस्थितियों में अदृश्य शक्ति किसी न किसी रूप में सहयोग करती तथा संकटग्रस्त को उबारती है।

प्रतापगढ़ (उ०प्र०) के जेठवारा थाना के पांती ग्राम में एक ऐसी घटना घटित हुई जिसमें दैवी अनुकम्पा प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हुई। कहा जाता है कि गाँव की एक महिला का पति मर गया। उसका दो वर्ष का बच्चा था। विधवा ने पुनर्विवाह के लिए एक युवक को राजी कर लिया विवाह में अड़ंगा आ खड़ा हुआ। युवक का कहना था कि बच्चे के रहते वह विवाह करने के लिए तैयार नहीं होगा। फलस्वरूप लड़की के माता–पिता बच्चे को लेकर हत्या करने के उद्‌देश्य से एक खेत में ले गये। इससे पूर्व कि गड़ासे का प्रहार बच्चे के ऊपर करें, एक भयंकर सर्प फुफकारता हुआ उनको काटने के लिए आगे बढ़ा। सर्प देखकर वे भयभीत होकर भाग गये। पुलिस ने बाद में उन दोनों को गिरफ्तार कर लिया। इस प्रकार बच्चे की जान बच गई।

दैवी शक्तियाँ समय–समय पर अपने प्रिय पात्रों का सहयोग अनुग्रह करती रहती हैं। साथ ही दुष्ट, आतताइयों को उनके कुकृत्यों के लिए

आत्माओं का सहयोग अनायास इस रूप में मिलते देखा गया है।

इंग्लैण्ड के न्यायिक इतिहास में उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में एक ऐसी घटना घटी, जिसने कानून व्यवस्था को भी चुनौती दे दी। इंग्लैण्ड के एक्सटर जेल में एक 'जान ली' नामक अपराधी बन्द था। हत्या के आरोप में न्यायालय द्वारा उसे मृत्यु दण्ड सुनाया गया। उस समय विद्युत् द्वारा फाँसी दी जाने की व्यवस्था आज की तरह नहीं थी। मोटी रस्सी के फन्दे द्वारा फाँसी दी जाती थी।

निर्धारित तिथि एवं समय पर डाक्टर ने उसके स्वास्थ्य की परीक्षा की। पादरी ने 'जान ली' के किये गये अपराधों के लिए परमात्मा से क्षमा–प्रार्थना की। फाँसी का फन्दा उसके गले में डालने के पूर्व जल्लाद जेम्स वेरा ने फाँसीघर के उपकरणों की भली–भाँति जाँच कर ली। फाँसी का फन्दा बनाकर खीचे जाने वाले रस्से को ठीक किया। मजिस्ट्रेट की देख–रेख में अपराधी के गले में फन्दा डाला गया। जल्लाद ने पीछे हटकर नीचे के तख्त को खींचा; किन्तु तख्ता बिल्कुल नहीं हिला। पुनः तख्ते का निरीक्षण किया कि सम्भवतः कहीं जाम हो गया हो, किन्तु पाया कि वह बिल्कुल ठीक था। दुबारा जोर लगाकर तख्ता खींचा; किन्तु आश्चर्य कि वह टस से मस न हुआ। जल्लाद ने तीसरी बार तख्ते की जाँच करने के बाद खींचने का प्रयास किया; किन्तु असफलता ही हाथ लगी।

तीसरी बार फाँसी पर चढ़ाये जाने की मानसिक पीड़ा से 'जान ली' भीषण ठण्ड में भी पसीने से डूब गया। मजिस्ट्रेट सामने खड़ा सारी कार्यवाही देख रहा था। उसके जीवन की यह अभूतपूर्व घटना थी। वह विस्मित था कि फाँसी के सारे उपकरण ठीक होते हुए भी तख्ता खिसक क्यों नहीं रहा है। निरन्तर सात मिनट तक अथक प्रयास तथा तीन बार फाँसी के तख्ते पर चढ़ाये जाने पर भी उसे मृत्यु दण्ड नहीं दिया जा सका। कुछ समय के लिए फाँसी को स्थगित करने का आदेश किया गया। फाँसी का निर्धारित समय बीत चुका।

सर विलियम कोर्ट में इस मामले को प्रस्तुत करते हुए निवेदन किया गया कि न्यायालय द्वारा निर्धारित समय पर पूरी सर्तकता एवं सावधानी रखने के बाद भी मृत्यु दंड न दिया जा सका। अतः न्याय की रक्षा के लिए फाँसी के लिए अगला समय निर्धारित किया जाय। उच्च न्यायालय ने अपील को निरस्त करते हुए कहा कि "अपराधिक दण्ड प्रक्रिया संहिता के अनुसार न्यायालय द्वारा मृत्यु दण्ड की सारी कार्यवाही पूरी हो चुकी है। इस समय को आगे बढ़ाना न्यायालय के क्षेत्राधिकार के बाहर है विश्व कै न्यायिक इतिहास में यह एक आश्चर्य जनक घटना थी; जबकि एक व्यक्ति को निरन्तर ७ मिनट तक फाँसी दी जाती रही हो और वह बच गया हो।

पत्रकारों ने 'जान ली' से पूछा कि 'वह कैसे बच गया'। उत्तर में उसने कहा कि 'वह निर्दोष था, हत्या में उसे किसी प्रकार फँसा दिया गया था। अपनी सफाई एवं समुचित साक्ष्य वह न्यायालय में प्रस्तुत नहीं कर सका, जिससे उसको मृत्यु दण्ड मिला। फाँसी के तख्ते पर ईश्वरीय न्याय एवं सहयोग की प्रार्थना वह निरन्तर करता रहा। सतत किसी अदृश्य शक्ति का अनुदान बरसते उसने अनुभव किया।

सहायकों, पितरों की अपनी सामर्थ्य सीमा है; किन्तु उससे बहुत बड़ी, विस्तृत भूमिका देवसत्ताओं, जीवन्मुक्त, आत्माओं तथा इन सबकी उद्गम्, परमशक्ति–सर्वोच्च सत्ता की है, धर्म के सरंक्षण, अधर्म–अनीति–अनाचार के प्रतिकार की ईश्वरीय प्रक्रिया ब्रह्माण्डव्यापी है वह हर देशकाल में चलती है, कभी रुकती नहीं।

अन्यायी कौरव भरी सभा में द्रोपदी का चीरहरण करने पर तुले थे। उस अनीति का प्रतिकार कोई नहीं कर रहा था। भीष्म, द्रोण जैसे विद्वान् नीतिवेत्ता सिर झुकाये बैठे थे। वह असहाय अबला लुटी जा रही थी। परम सत्ता से यह अन्याय महीं देखा गया और उसने सहायता कर उसकी लाज बचायी।

दमयन्ती वीहड़ वन में अकेली थी, व्याध उसका सतीत्व नष्ट करने

पर तुला था। सहायक कोई नहीं । उसकी नेत्र ज्योति में से भगवान् प्रकट हुए और व्याध जलकर भस्म हो गया, दमयन्ती पर कोई आँच नहीं आई। प्रहलाद के लिये उसका पिता ही जान का ग्राहक बन बैठा था, बच कर कहाँ जाय? खम्भे में से नृसिंह भगवान् प्रकट हुए और प्रहलाद की रक्षा हुई। घर से निकाले हुए पाण्डवों की सहायता करने, उसके घोड़े जोतने भगवान् स्वयं आये। नरसी मेहता के सम्मान की रक्षा भगवान् ने की। ग्राह के मुख से गज के बन्धन छुड़ाने के लिये प्रभु नगे पैरों दौड़े आये थे।

मीरा को विष का प्याला भेजा गया और साँपों का पिटारा, पर वह मरी नहीं। न जाने कौन उनके हलाहल को चूस गया और मीरा जीवित बची रही। गाँधी को अनेक सहयोगी मिले और वे दुर्दान्त शक्ति से निहत्थे लड़ कर जीते। भागीरथ की तपस्या से गंगा द्रवित हुई और धरती पर बहने के लिये तैयार हो गई शिवजी सहयोग देने के लिये आये और गंगा को जटाओं में धारण किया, भागीरथ की साधना पूरी हुई। दुर्वाशा के शाप से संत्रस्त राजा अम्बरीष की सहायता करने भगवान् का चक्र सुदर्शन स्वयं दौड़ा आया था।

सनातन सत्ता तो काल गति और ब्रह्माण्ड से सर्वथा अतीत है। जिस तरह वह प्राचीन काल में थी, आज भी है और उसकी अदृश्य सहायताएँ पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक आज भी प्राप्त करते रहते हैं। टंग्स्टन तार पर धन व ऋण विद्युत् धाराओं के अभिव्यक्त होने की तरह यह ईश्वरीय अनुदान जिन दो धाराओं के सम्मिश्रण से किसी भी काल में प्रकट होते रहते हैं, वह श्रद्धा और विश्वास रूपी धारायें जहाँ कहीं, जब कभी हार्दिक अभिव्यक्ति पाती है; परमेश्वर की अदृश्य सहायता वहाँ उभरे बिना नहीं रह सकती।

अविज्ञात की अनुकम्पा भी अदृश्य सत्ता का ही अनुदान—

उपनिषद् के ऋषि का अनुभव है कि आत्मा जिसे वरण करता है

उसके सामने अपने रहस्यों को खोलकर रख देता है। इस उक्ति का निष्कर्ष यह है कि रहस्यों का उद्घाटन चेतना की गहराइयों से होता है। मानवी संसार की सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह अनुदान इस धरती पर उतारता रहता है। यह अवतरण जिनके माध्यम से होता है, वे सहज ही श्रेयाधिकारी बन जाते हैं।

वैज्ञानिक आविष्कारों का श्रेय यों उन्हें मिलता है जिनके द्वारा वे प्रकाश में आने योग्य बन सकें। किन्तु यहाँ यह विचारणीय है कि क्या उसी एक व्यक्ति ने उस प्रक्रिया को सम्पन्न कर लिया? आविष्कर्त्ता जिस रूप में अपने प्रयोगों को प्रस्तुत कर सके हैं, उसे प्रारम्भिक ही कहा जा सकता है। सर्वप्रथम प्रदर्शन के लिए जो आविष्कार प्रस्तुत किये गये वे कौतुहलवर्धक तो अवश्य थे, आशा और उत्साह उत्पन्न करने वाले भी– पर ऐसे नहीं थे, जो लोकप्रिय हो सकें और सरलतापूर्वक सर्वसाधारण की आवश्यकता पूरी कर सकें। रेल, मोटर, टेलीफोन हवाई जहाज आदि के जो नमूने पंजीकृत कराये गये थे, उनकी स्थिति ऐसी नहीं थी कि उन्हें सार्वजनिक प्रयोग के लिए प्रस्तुत किया जा सके यह स्थिति तो धीरे–धीरे बनी है और उस विकास में न्यूनाधिक उतना ही मनोयोग और श्रम पीछे वालों को भी लगाना पड़ा है जितना कि आविष्कर्त्ताओं को लगाना पड़ा था।

संसार के महान् आन्दोलन आरम्भिक रूप में बहुत छोटे थे। उनके आरम्भिक स्वरूप को देखते हुए कोई यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि कभी इतने सुविस्तृत बनेंगे और संसार की इतनी सेवा कर सकेंगे। किन्तु अविज्ञात ने जहाँ उन आन्दोलनों को जन्म देने वाली प्रेरणा की निर्झरणी का उद्गम उभारा, किसी परिष्कृत व्यक्ति के माध्यम से उसे विकसित किया, साथ ही इतनी व्यवस्था और भी बनाई कि उस उत्पादन को अग्रगामी बनाने के लिए सहयोगियों की शृंखला बनती बढ़ती चली जाय। ईसा, बुद्ध, गाँधी आदि के महान आन्दोलनों का आरम्भ और अन्त–बीजारोपण और विस्तार देखते हुए लगता है यह

श्रेय–साधन किसी अविज्ञात शक्तियों में पितर–सत्ताओं का भी समावेश हैं।

जिन आविष्कर्त्ताओं को श्रेय मिला, उन्हें सौभाग्यशाली कहा जा सकता हैं। गहरे मनोयोग के सत्परिणाम क्या हो सकते हैं ? इसका उदाहरण देने के लिए भी उनके नामों का उत्साहवर्धक ढंग से उल्लेख किया जा सकता है। गहराई में उतरने की प्रेरणा भी उस चर्चा से कितनों को ही मिलती है। पर यह भुला न दिया जाना चाहिए कि उन आविष्कारों के आरम्भ के रहस्य प्रकृति ही अपना अन्तराल खोलकर प्रकट करती है। हाँ इतना अवश्य है कि इस प्रकार के रहस्योद्घाटन हर किसी के सामने नहीं होते। प्रकृति को भी पात्रता परखनी पड़ती है। अनुदान और अनुग्रह भी मुफ्त में नहीं लूटे जाते, उन्हें पाने के लिए भी उपयुक्त मनोभूमि तो उस श्रेयाधिकारी को ही विर्निमित करनी पड़ती है।

आविष्कार की चर्चा इतिहास पुस्तकों में जिस प्रकार होती है, वह बहुत पीछे की स्थिति है। आरम्भ कहाँ से होता है यह देखना हो तो पता चलेगा कि उन्हें आवश्यक प्रकाश और संकेत अनायास ही मिला था। इनमें उनकी पूर्व तैयारी नहीं के बराबर थी। दूसरे शब्दों में कहा जाय तो यह भी कह सकते हैं कि उन पर इलहम जैसा उतरा और कुछ बड़ा कर गुजरने के लिए आवश्यक मार्ग दर्शन देकर चला गया। संकेतों को समझने और निर्दिष्ट पथ पर मनोयोगपूर्वक चल पड़ने के लिए तो उन आविष्कर्त्ताओं की प्रतिभा को सराहना ही पड़ेगा।

बात लगभग दो हजार वर्ष पुरानी है। एशिया माइनर के कुछ गड़रिये पहाड़ी पर भेड़े चरा रहे थे। उनकी लाठियों के पेंदे में लोहे की कीलें जड़ी थीं। उधर से गुजरने पर गड़रियों ने देखा कि लाठी पत्थरों से चिपकती है और जोर लगाने पर ही छूटती। पहले तो इसे भूत–प्रेत समझा गया फिर पीछे खोजबीन करने से चुम्बक का विज्ञान यहीं से आरम्भ हुआ। आज तो चुम्बक एक बहुत बड़ी शक्ति की भूमिका निभा रहा है।

यह गड़रिये चुम्बक का आविष्कार करने का उद्देश्य लेकर नहीं निकले थे और न उनमें इस प्रकार के तथ्यों को ढूँढ़ निकालने और विश्वव्यापी उपयोग के लायक किसी महत्त्वपूर्ण शक्ति को प्रस्तुत कर सकने की क्षमता ही थी।

न्यूटन ने देखा कि पेड़ से टूटकर सेव का फल जमीन पर गिरा। यह दृश्य देखते सभी रहते हैं, पर न्यूटन ने उस क्रिया पर विशेष ध्यान दिया और माथा–पच्ची की कि फल नीचे ही क्यों गिरा, ऊपर क्यों नहीं गया? सोचते–सोचते उसने पृथ्वी की आकर्षण शक्ति का पता लगाया और पीछे सिद्ध किया कि ग्रह–नक्षत्रों को यह गुरुत्वाकर्षण ही परस्पर बाँधे हुए है। इस सिद्धान्त के उपलब्ध होने पर ग्रह विज्ञान की अनेकों प्रक्रियाएँ समझ सकना सरल हो गया।

पेड़ से फल न्यूटन से पहले किसी के सामने न गिरा हो ऐसी बात नहीं है। असंख्यों ने यह क्रम इन्हीं आँखों से देखा होगा पर किसी अविज्ञात ने अकारण ही उसके कान में गुरुत्त्वाकर्षण की सम्भावना कह दी और उसने संकेत की पूँछ मजबूती से पकड़ कर श्रेय प्राप्त करने वाली नदी पार कर ली।

अब से ३०० वर्ष पुरानी बात है हालैंड का चश्मा बेचने वाला ऐसे ही दो लैंसों को एक के ऊपर एक उलट पुलट कर कौतुक कर रहा था, दोनों शीशों को संयुक्त करके आँख के आगे रखा तो विचित्र बात सी दिखाई पड़ी। उसको गिरजा बहुत निकट लगा और उस पर की गई नक्कासी बिल्कुल स्पष्ट दीखने लगी। दूरबीन का सिद्धांत इसी घटना से हाथ लगा और अब अनेक प्रकार के छोटे–बड़े दूरबीन विज्ञान की शोधों में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

एक्सरे के आविष्कार का श्रेय जिस व्यक्ति को मिला, उसने जान बूझ कर नहीं बनाया था। उस संयोग के पीछे कोई अविज्ञान ही काम कर रहा होगा। अन्यथा ऐसे–ऐसे संयोग आये दिन न जाने कितने सर्वसाधारण के सामने आते रहते हैं। उसकी ओर ध्यान जाने का कोई कारण भी नहीं होता।

बात आविष्कारों की हो या आन्दोलनों की, श्रेय साधनों का शुभारम्भ 'अविज्ञात' की प्रेरणा से होता है। इस अविज्ञात को ब्रह्म कंहा जाय या प्रकृति, इस पर बहस करने की आवश्यकता नहीं। श्रेय लक्ष्य है। प्रगति अभीष्ट है। वह आत्मा के–परमात्मा के–उद्‌गम से आविर्भूत होता है। एक सहयोगी शृंखला का परिपोषण पाकर विकसित होता है। एक सहयोगी पितरों स्वर्गीय श्रेष्ठ आत्माओं द्वारा भी प्राप्त होता है। देवसत्ताओं द्वारा भी तथा सर्वोच्च सत्ता की अव्यक्त प्रेरणा द्वारा भी।

गड़रियों ने जब अग्नि का आविष्कार किया, उस समय पहले तो आग की चिनगारियों को उन्होंने भूतों का ही उपद्रव समझा, पीछे पितरों की कृपा मान कर उत्सव मनाया, आनन्दित हुए और पितरों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की।

श्रद्धा–भाव रखने तथा श्रेष्ठ जीवन क्रम अपनाए रहने पर उच्च स्तरीय पितर–सत्ताएँ सचमुच ऐसे ही महत्त्वपूर्ण सहयोग–अनुदान प्रकाश–प्रेरणाएं प्रदान करती हैं, जो व्यक्ति एवं समाज के जीवन को सुख–सुविधाओं से भर देती है। उन पितरों की अपेक्षा यही रहती है कि इन उदार अनुदानों का दुरुपयोग न हो। परमेश्वर की भी तो मनुष्यों से यही अपेक्षा रहती है। पर कृतघ्न मनुष्य इतनी–सी अपेक्षा भी पूरी नहीं कर पाता।



अनीति की अवरोधक : परोक्ष शक्तियाँ

मनुष्य जैसा भी सोचता एवं करता है उसका प्रभाव उसी तक नहीं रहता है वरन् समीपवर्ती वातावरण एवं सम्बन्धित व्यक्ति भी प्रभावित होते हैं। यहाँ तक कि जड़ वस्तुओं के ऊपर भी बुरा–भला प्रभाव पड़ते देखा गया है। घटनाओं के सूक्ष्म संस्कार भी चिरकाल तक बने रहते हैं और विभिन्न प्रकार की प्रेरणाओं के रूप में अपना परिचय देते हैं। इस बात की प्रत्यक्ष अनुभूति अच्छे–बुरे व्यक्तियों एवं उनसे जुड़े स्थानों पर जाकर की जा सकती है, भले ही वे वर्तमान में जीवित न हों। देवालयों, मन्दिरों, देव पुरुषों, महामानवों, सन्त, ऋषियों की तपस्थली पर पहुँचने वालों के मन में परमार्थ की–लोकमंगल की भावनाएँ हिलोरें लेने लगती हैं। इसके विपरीत कसाईखानों आदि स्थानों पर पहुँचने से मन घृणा, विक्षोभ एवं अशान्ति से भर उठता और शीघ्रातिशीघ्र वहाँ से भागने को जी करता है। यह स्थान एवं उनसे जुड़े सूक्ष्म वातावरण का ही प्रभाव है।

प्रचलित धार्मिक मान्यता के अनुसार मरणोपरान्त भी आत्माएँ अपने से जुड़े वातावरण में चिरकाल तक विद्यमान रहतीं तथा अपनी सद्भावना अथवा दुर्भावना का परिचय, सहयोग अथवा आतंक के रूप में देती हैं। वातावरण को अपना वशवर्ती बनाकर ये सूक्ष्मात्माएँ किसी भी प्रकार की अनाधिकार चेष्टा अथवा लूट–खसोट की अनीतियुक्त में भूमिका निभाती व समुचित दण्ड देती हैं। यह एक स्पष्ट एवं सुनिश्चित तथ्य है कि इस धरती पर भूमिगत विशेषता एवं सम्पदा का निर्माण इस तालमेल के साथ हुआ है कि उस क्षेत्र के निवासी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते रह सकें। अन्न, फल और औषधियों के बारे में प्रसिद्ध है

कि वहाँ के जन्मे लोगों को उसी क्षेत्र का उत्पादन अनुकूल पड़ता है। द्रुतगामी साधनों से पदार्थों को सुदूर स्थानों तक भेजा जा सकता है, पर प्राणियों की, पदार्थों की संरचना में जो तत्त्व घुले रहते हैं, उनका तालमेल न बैठ पाने से लाभदायक प्रतीत होते हुए भी हानिकारक बन बैठते हैं। क्षेत्रीयता की बात ऐसे ही कई दृष्टिकोणों के आधार पर बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य के रूप में सामने आती है।

खनिज पदार्थों एवं अन्य प्राकृतिक सम्पदाओं के सम्बन्ध में भी यही बात है। वे उस क्षेत्र के निवासियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर वितरित हो गई हैं। उत्तरी ध्रुव के निवासी मनुष्यों और प्राणियों की शारीरिक संरचना तथा उपलब्ध पदार्थ सामग्री को देखते हुए सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रकृति की वितरण व्यवस्था कितनी दूरदर्शितापूर्ण है। खनिज तथा अन्यान्य प्राकृतिक सम्पदाओं के सम्बन्ध में भी यही बात है।

क्षेत्रीय उपलब्धियों से लाभान्वित होने का प्रथम अधिकार वहाँ के भूमि पुत्रों का ही है। इसके बाद अन्यत्र के लोगों को उससे लाभान्वित होने का अवसर मिलना उचित है। इसी आधार पर देशों के क्षेत्रीय अधिकारों को मान्यता मिलती रही है। उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद की निन्दा का कारण यही है कि स्थानीय लोगों के लिए दी गई प्रकृति उपलब्धियों का अपहरण अन्यत्र के लोग करते हैं। तो उसमें अव्यवस्था एवं अनीति का फैलना स्वाभाविक है। ऐसे शोषण अपहरण का जहाँ विश्व न्याय के आधार पर विरोध होता है, वहाँ ईश्वरीय व्यवस्था भी उसे निरस्त करने में सहायक होती है। प्रकृति, प्रतिरोध का परिचय तब अधिक अच्छी तरह देखा जा सकता है, जब समर्थों द्वारा असमर्थों के स्वत्वों का अपहरण करने वाली अनीति का प्रतिरोध उभरता है।

अमेरिका की भूमि पर मूल अधिकार उस देश के मूल निवासियों का ही माना जा सकता है। वहाँ की प्रकृति सम्पदा का लाभ भी उन्हीं को मिलना चाहिए। गोरे लोगों ने बलपूर्वक उस भूमि पर अधिकार कर तो

लिया है, पर प्रकृति वहाँ के मूल निवासियों के पक्ष में ही अपना समर्थन देती है और लुटेरों को असफल बनाने वाले आधार खड़े करती रहती है। इस सम्बन्ध में वहाँ के स्वर्ण क्षेत्रों में गोरों की असफलता विशेष रूप से विचारणीय है।

अमेरिका के ऐरिजोना प्रान्त में कुछ खाई खड्डों से भरे सघन वन प्रदेश ऐसे हैं जो न केवल अगम्य और डरावने हैं, वरन् उनमें रहस्यमयी विशेषताएँ भी पाई जाती हैं। यह रहस्य अलौकिकता वादियों और वैज्ञानिक शोधकर्त्ताओं के लिए एक पहेली बने हुए हैं।

कहा जाता है कि उस प्रदेश में या तो आसमान से सोने के धूलि–कण बरसते हैं या फिर पहाड़ उसे अदृश्य लावे की तरह उगलते जाते हैं। जो हो–उस क्षेत्र की पहाड़ियों को सोने के पर्वत का नाम दिया जाता है और अनेकों उस सम्पदा को सहज ही प्राप्त कर लेने के लालच में उधर जाते भी रहते हैं।

सम्पत्ति का लोभ जितना आकर्षक है उतना ही वहाँ के प्रहरी प्रेत पिशाचों के आतंक का भय भी बना रहता है। इस उपलब्धि के लिए अब तक सहस्रों दुस्साहसी उधर गये हैं। इनमें से अधिकांश को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा है। जो किसी प्रकार जीवित लौट आये हैं उनने सोने के अस्तित्व का तो आँखों देखा विवरण सुनाया है, पर साथ ही यह भी कहा है कि वहाँ अदृश्य आत्माओं का आतंक है। वे सोना बटोरने के लालच में जाने वालों का बेतरह पीछा करती हैं और यदि भाग न खड़ा हुआ जाय तो जान लेकर ही छोड़ती हैं।

भूमिगत विशेषताओं का अन्वेषण करने जो लोग पहुँचे हैं उन्होंने इस क्षेत्र को रूस के साइबेरिया की ही तरह रेडियो किरणों से प्रभावित बताया है। रूसी वैज्ञानिक साइबेरिया के कई क्षेत्रों को किसी अज्ञात विकिरण से प्रभावित मानते हैं और कहते हैं कि कभी अन्तरिक्ष या धरती से यहाँ अणु विस्फोट जैसी घटना घटी है। ऐसा किसी उल्कापात से भी हो सकता है। अमेरिकी लोग भी इस क्षेत्र की तुलना लगभग उस

रूसी प्रदेश से ही करते हैं। यहाँ एक ६०० फुट गहरा और एक मील लम्बा खड्ड है। समझा जाता है कि यह किसी उल्कापात का परिणाम है। उस क्षेत्र में से किसी उद्देश्य से जाने वाले व्यक्तियों पर सम्भवतः विद्यमान रेडियो विकिरण ही आतंकित करने जैसा प्रभाव उत्पन्न करता होगा और उस अप्रत्याशित प्रभाव को भूत–पलीतों का आक्रमण मान लिया जाता होगा।

रहस्यवादियों का मत है कि योरोपियनों के इस क्षेत्र पर कब्जा जमाने से पहले आदिवासी लोग रहते थे। इनमें से अपैची कबीजा मुख्य था। उसके साथ गोरों की झड़पें होती रहीं और इन मार्ग के कंटकों को हटाने के लिए अधिकर्त्ताओं द्वारा क्रूरतापूर्ण नर–संहार किये जाते रहे। इन मृतकों की आत्मायें ही प्रतिशोध से भरी रहती हैं और जो इधर से गुजरता है उस पर टूट पड़ती हैं।

कारण क्या है, यह तो अभी ठीक तरह नहीं समझा जा सका, किन्तु सोना बरसने और आतंक छाये रहने की बात सच है। गाथा और किम्वदन्तियाँ तो बहुत दिनों से प्रचलित थीं। वहाँ जाने और कुछ कमाकर लाने की बात भी बहुतों ने सोची, पर साहस सबसे पहले पाइलीन वीवर ने किया। वह अपने कुछ साथियों के साथ आवश्यक सामान लेकर गया और उस क्षेत्र में डेरा लगाया। दूसरे साथी तो सो गये, पर वीवर को नींद नहीं आई। वह अकेला उठा और कौतूहल में दूर तक चला गया। उस जगह सोने के टुकड़े पाये। ध्यान से देखा तो वे शत–प्रतिशत सोने के थे। उसने बहुत से टुकड़े जमा कर लिये और जितना वजन उठ सकता था उतना साथ लेकर वापस लौटा। लौटते ही उसकी खुशी आतंक में बदल गई। डेरा जला हुआ पड़ा था और वहाँ सामान्यतया मनुष्यों की राख भर बची हुई थी। आँख उठाकर पर्वत की चोटी को देखा तो, वहाँ से गिद्धों के झुण्ड की तरह भयानक छायायें उसकी ओर बढ़ती दिखाई पड़ी। डर के मारे वह बेहोश हो गया। बहुत समय बाद जब होश आया तो किसी प्रकार भाग चलने का उपाय

निकाला और जैसे–तैसे घर वापस आ गया।

इस घटना की चर्चा तो बहुत हुई, पर दुबारा उधर जाने का साहस किसी ने भी नहीं किया। इसके १६ वर्ष बाद मैक्सिको का एक दुस्साहसी व्यक्ति एक मजबूत और साधन–सम्पन्न जत्था लेकर गया। उस दल के प्रायः सभी व्यक्ति उसी प्रयास में मारे गये, केवल एक ही उनमें से जीवित लौटा। उसने सोने की उपस्थिति और मँडराने वाली विपत्ति के जो विवरण सुनाये, उसने कौतूहल तो बहुत बढ़ाया, पर नये जत्थों ने उधर जाने का साहस उत्पन्न नहीं किया।

छुटपुट रूप से अनेकों व्यक्ति एकाकी अथवा दुकड़ियाँ बनाकर उधर जाते रहे, किन्तु किसी को जान गँवाने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगा। इसके बाद अमेरिका का ख्यातिनामा डाक्टर लवरेन कोमली का अभियान हुआ। वे बहुत तैयारी के साथ गये थे। साधनों और जानकारी की जितनी आवश्यकता थी, उसने जुटा ली थी। साथी बीच में से ही लौट आये और मायाविनी छायाओं के आतंक के भयानक विवरण सुनाते रहे। लवरेन ने खोज को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। वे अकेले ही बढ़ते गये; किन्तु सोने के स्थान पर पागलपन साथ लेकर वापस लौटे। कुछ दिन भयभीत विक्षिप्ता के शिकार रहकर वे भी मौत के मुँह में चले गये।

होनोलूलू के व्यवसाइयों का एक जत्था स्वर्ण सम्पदा को प्राप्त करने के उद्देश्य से उधर गया और आस्ट्रेलिया के युवक फैजने ने रहस्यों पर से पर्दा उठाने की ठानी। जर्मनी के इंजीनियरों का एक दल वालेज के नेतृत्व में बड़े दमखम के साथ उधर पहुँचा। वालेज अपने पूर्ववर्ती शोधकर्त्ताओं की तुलना में अधिक चतुर था, उसने उस क्षेत्र की एक आदिवासी युवती को ललचाकर विवाह कर लिया और उसकी सहायता से स्वर्ण–भण्डार के स्थान तथा छायाओं के भेद जानने का प्रयत्न करने लगा। छायाओं को यह पता लग गया। उनने युवती का अपहरण कर लिया और वालेज की जीभ काट ली। इसी कष्ट में उसकी मृत्यु हो गई।

उसकी डायरी किसी प्रकार साथियों को मिल गई। उसके विवरणों से पता चलता है कि उसने स्वर्ण–स्रोतों का पता लगा लिया था। भूमिगत कई रहस्यमय स्थान देखे, ढूँढ़े और प्रेतात्माओं को चकमा देकर सुरंगों से बच निकलने में सफल होता रहा। इतना सब उसकी आदिवासी पत्नी की सहायता से ही सम्भव हो सका, किन्तु दुर्भाग्य ने उसका पीछा छोड़ा नहीं और अपनी जान गँवा बैठा। यह प्रयत्न सन् १८६१ का है। इसके बाद अन्तिम प्रयत्न सन् १६५६ में हुए। स्टेनलोफर्नेल्ड और फरेश नामक दो व्यक्तियों ने संयुक्त प्रयत्न नये सिरे से सोना पाने के लिए किये। उसमें पूर्ववर्ती कठिनाइयों और सफलताओं को पूरी तरह ध्यान में रखा गया। इस बार की तैयारी अधिक थी। प्रयत्न भी बड़े पैमाने पर और अधिक दिन चले पर उसका निष्कर्ष इतना ही निकला कि फरेश प्राणों से हाथ धो बैठा और फर्नेल्ड किसी प्रकार जान बचाकर वापस लौट आया। पल्ले कुछ नहीं पड़ा।

इस स्वर्ण अभियान में जितने मृतकों की लाशें मिल सकीं, इनके देखने से एक ही निष्कर्ष निकला कि वे सभी मौतें शरीर से खून चूस लिए जाने के कारण हुई। इनमें से किसी की भी देह में कहीं छेद नहीं पाये गये और म कहीं कपड़ों पर या जमीन पर रक्त बिखरा हुआ ही पाया गया फिर यह रक्त चूसने की क्रिया किसके द्वारा किस प्रकार की गई यह अभी भी उतना ही रहस्यमय बना हुआ है जितना पहले कभी था।

अमेरिका में मिसीसिपी नदी के किनारे फैला हुआ होमोचिटो जंगल संसार के सर्वाधिक सुन्दर वनों में समझा जाता है। इस जंगल के एक हिस्से में एक छोटा सा गाँव 'नैट चेज' बसा हुआ है। इस गाँव से ही करीब बीस मील दूरी पर रीडर बोव नामक एक धनी सम्पन्न किसान का कृषि फार्म है। फार्म के उत्तरी भाग में मिसीसिपी नदी का एक दलदली डेल्टा है। डेल्टा पर खड़े होने से वहाँ एक बहुत चौड़ा छेद दिखाई देता है। बताया जाता है कि यह छेद दिनोंदिन क्रमशः चौड़ा ही होता चला

आया है। इस छेद में कहा जाता है कि एक सात फुट चौड़ा और चार फुट ऊँचा घड़ा बहुमूल्य रत्न–राशि और स्वर्ण–खण्डों से भरा हुआ गढ़ा है। वहाँ बसने वाले लोगों को प्रायः सभी को जानकारी है। इतनी बहुमूल्य रत्नराशि के बारे में जानकर किसका जी नहीं ललचायेगा? पर कहते हैं कि उसे प्राप्त करने के लिए अब तक जितने भी प्रयास हुए हैं, उनमें से एक भी सफल नहीं हो सका है। अभी तक यह सम्भव नहीं हो सका है कि उसे निकालकर कोई अपने अधिकार में ले सके।

पिछले डेढ़ सौ वर्षों से उसे पाने के लिए अब तक जितने भी प्रयास हुए हैं, वे सबके सब असफल होते आये हैं। इसका कारण यह बताया जाता है कि उस पर एक प्रेतात्मा डेरा जमाये बैठी हुई है और वह उसे निकालने के लिए किये गये सभी प्रयत्नों को असफल कर देती हैं। रीडर बीव एवं उसके पूर्वज खजाने को प्राप्त करने के लिए न जाने कब से प्रयत्न करते आ रहे हैं। उन्होंने इस डेल्टा के पास एक मकान भी कृषि व्यवस्था की देखभाल के लिए बनाया था। पर कुछ ऐसी घटनाएँ घटीं जिनके कारण रीडर बीव के पूर्वजों ने इस स्थान पर भूतों का आधिपत्य समझा और उसे छोड़ दिया। तब से वह स्थान ऐसा ही खाली पड़ा है। उस स्थान पर रहना तो दूर रहा, किसी को ठहरने की हिम्मत भी नहीं होती।

इस गढ़े हुए धन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि यह कभी डाकुओं द्वारा लूटकर इकट्ठा किया और जमीन में गाढ़ दिया गया था। किसी जमाने में नेटचेच और न्यू आर्लिस के बीच एक पाँच सौ मील लम्बी सड़क थी और उस पर अच्छा व्यापार होता था। उसी क्षेत्र में कई डाकू दल सक्रिय थे और भारी लूटमार किया करते थे। इन्हीं डाकुओं के सरदार लैफिट, मैसिन, हार्प आदि में से किसी ने यह धन इकट्ठा कर इस सुरक्षित स्थान पर गाढ़ दिया। तब वहाँ ऐसा दलदल नहीं था। पीछे नदी का पानी रिसता रहा और दलदल बन गया। डाकू पकड़े और मारे गये तथा धन जहाँ का तहाँ गड़ा रहा। रीडर बीव के पूर्वजों ने खजाने के सम्बन्ध में प्रचलित किंवदन्ती के आधार पर ही इस क्षेत्र को

खरीद लिया और उनके समय से ही कितने ही इन्जीनियर, ठेकेदार तथा दूसरे कुशलकर्मी समय–समय पर धन निकालने की योजना लेकर आते रहे।

निकाले जाने वाले खजाने के एक निश्चित प्रतिशत का भागीदार बनाने के लिखित इकरारनामे के आधार पर इन लोगों ने विशालकाय यन्त्रों, बहुसंख्यक श्रमिकों तथा बांस, बल्ली, रस्से आदि उपकरणों की सहायता से उसे निकालने का जी तोड़ प्रयत्न किया पर अन्ततः असफलता ही हाथ लगती। कितना ही परिश्रम किया जाता, पर घड़ा और गहरा धँसता जाता तथा खुदाई का क्षेत्र पहले की अपेक्षा और अधिक चौड़ा हो जाता। यह गोल्ड होल अमेरिकी बुद्धि, कौशल और तकनीकी पुरुषार्थ के लिए अभी भी एक चुनौती बना हुआ है।

सन् १९३९ में इस घड़े को निकालने के लिए सबसे बड़ा प्रयत्न हुआ। इसके लिए भारी बुलडोजर मशीनों से कीचड़ हटाने तथा बगल से रास्ता बनाने के उपाय करने के लिए इन्जीनियरों की एक समिति बनाई गई और यह योजना बड़े उत्साह के साथ कार्यान्वित की गई। सामने रखा घड़ा निकालने वालों के पुरुषार्थ को चुनौती ही देता रहा और हर प्रयास विफल जाते रहे। क्रेन लगाकर जब घड़े की गरदन पकड़कर बाहर निकालने का प्रयत्न किया गया तो अकस्मात इतनी विकट वर्षा होने लगी कि बुलेक और स्टिक्लोन, जिनके नेतृत्व में यह योजना बनाई और क्रियान्वित की गई थी, रत्नराशियों से भरा घड़ा निकालने का विचार छोड़कर वापस लौट आये। इसके बाद भी अनेकों प्रयास किये गये, पर घड़ा है कि अपने स्थान से टस से मस नहीं होता। जिसने भी इन प्रयासों में भाग लिया, वह अकाल मृत्यु को प्राप्त हुआ है।

इन समस्त घटनाक्रमों पर दृष्टि डालने पर कई जिज्ञासाएँ उभरती हैं। एक तो यह–क्या ये गाथायें असत्य हैं, दूसरा यह कि समस्त साधन आज मनुष्यों के पास उपलब्ध होते हुए भी, वैज्ञानिक–तकनीकी के

विचारणीय है, वह यह कि स्रष्टा की अनेकानेक विधि–व्यवस्थाओं धन–सम्बन्धी नीति, मर्यादा और व्यवस्था क्या है? वस्तुतः यह बात भलीभाँति समझ ली जानी चाहिए कि नीतियुक्त सम्पदा के साथ एक और मर्यादा जुड़ी हुई है कि उसका उपभोग या संग्रह नहीं हो सकता, उसका उपयोग होना चाहिए और सार्वजनिक वितरण भी।

इस नीति मर्यादा की कसौटी पर जब खजानों में दबी सम्पदा को परखा जाता है तो प्रतीत होता है कि वह हर दृष्टि से खोटी है। उसमें धन सम्बन्धी नीति–मर्यादाओं का पूरी तरह उल्लंघन हुआ है। फलस्वरूप उसके संग्रही वैसा लाभ न उठा सकें, जैसा कि वे चाहते थे। जिस प्रकार उनने उसे हड़पने की चेष्टा की, उसी प्रकार प्रकृति ने उनके हाथ से छीन लिया। यह छीनना भी सामान्य रीति से नहीं, वरन् करारे तमाचे लगा–लगाकर उसे उगलने के लिए बाध्य किया गया।

लगता है कि सूक्ष्म जगत् में ऐसे किन्हीं अदृश्य प्रहरियों की, चौकीदारी भी विद्यमान है जो न्याय का समर्थन और लूट–खसोट का प्रतिरोध करने के लिए अपनी जागरूकता का परिचय देते रहते हैं। सम्भवतः उस क्षेत्र की स्वर्ण–सम्पदा की रखवाली वे ही करते हों। यह भी अनुमान लगाने की गुञ्जाइश है कि जिनके स्वत्वों का अपहरण किया गया, जिन्हें निर्दयतापूर्वक मारा गया, उनकी आत्माएँ प्रतिशोध की भावनायें भरे हुए उस इलाके में निवास करती हों और उनकी रोकथाम से मुफ्त का धन पाने वालों को असफल रहना पड़ता हो। आत्माओं द्वारा न्याय के संरक्षण और अनौचित्य का प्रतिरोध एक तथ्य है। साथ ही प्रकृति–व्यवस्था में स्थानीय भूमि–पुत्रों के लाभान्वित होने की जो मर्यादा है, उसका उल्लंघन भी ऐसे कारण उत्पन्न कर सकता है जैसे कि अमेरिका एवं अन्यान्य स्थानों पर स्वर्ण एवं गढ़ी सम्पत्ति हासिल करने के आतुर व्यक्तियों को भुगतने पड़े हैं।



पितरों के प्रति श्रद्धा–कृतज्ञता की अभिव्यक्ति

भारतीय संस्कृति ने यह तथ्य घोषित किया है कि मृत्यु के साथ जीवन समाप्त नहीं होता। अनन्त जीवन शृंखला की एक कड़ी मृत्यु भी है। इसलिए संस्कारों के क्रम में 'जीव' की उस स्थिति को भी बाँधा गया है, जब वह एक जन्म पूरा करके अगले जीवन की ओर उन्मुख होता है। कामना की जाती है कि सम्बन्धित जीवात्मा का अगला जीवन पिछले की अपेक्षा अधिक सुसंस्कारवान् बने। इस निमित्त जो कर्मकाण्ड किए जाते हैं, उनके लाभ जीवात्मा की क्रिया–कर्म करने वालों की श्रद्धा के माध्यम से ही मिलते हैं। इसीलिए मरणोत्तर संस्कार को श्राद्धकर्म भी कहा जाता है।

इस दृश्य संसार में स्थूल शरीर वालों को जिस इन्द्रिय भोग, वासना, तृष्णा एवं अहंकार की पूर्ति में सुख मिलता है, उसी प्रकार पितरों का सूक्ष्म शरीर शुभ कर्मों से उत्पन्न सुगन्ध का रसास्वादन करते हुए तृप्ति अनुभव करता है। उनकी प्रसन्नता तथा आकांक्षा का केन्द्र बिन्दु श्रद्धा है। श्रद्धा भरे वातावरण के सानिध्य में पितर अपनी अशान्ति खोकर आनन्द का अनुभव करते हैं। श्रद्धा ही उनकी भूख है, इसी से उन्हें तृप्ति होती है। इसलिए पितरों की प्रसन्नता के लिए श्राद्ध एवं तर्पण किए जाते हैं। पितर वे हैं, जो पिछला शरीर त्याग चुके; किन्तु अगला शरीर अभी प्राप्त नहीं कर सके। इस मध्यवर्ती स्थिति में रहते हुए वे अपना स्तर मनुष्यों जैसा ही अनुभव करते हैं।

मुक्त आत्माओं और पितरों के प्रति मनुष्यों को वैसा ही श्रद्धाभाव दृढ़ रखना चाहिए: जैसा देवों–प्रजापतियों तथा परमात्म–सत्ता के प्रति। मुक्तों, देवों, प्रजापतियों एवं ब्रह्म को तो मनुष्यों की किसी सहायता की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु पितरों को ऐसी आवश्यकता होती है।

उन्हें ऐसी सहायता दी जा सके, इसीलिए मनीषी–पूर्वजों ने पितर–पूजन, श्राद्ध–कर्म की परम्परायें प्रचलित की थीं। उनकी सही विधि और उनमें सन्निहित प्रेरणा को जानकर पितरों को सच्ची भावना–श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने पर वे प्रसन्न पितर बदले में प्रकाश, प्रेरणा, शक्ति और सहयोग देते हैं। पितरों को स्थूल सहायता की नहीं, सूक्ष्म भावात्मक सहायता की ही आवश्यकता होती है। क्योंकि वे सूक्ष्म शरीर में ही अवस्थित होते हैं। इस दृष्टि से मृत्यु के पश्चात् पितृपक्ष में, मृत्यु की तिथि के दिन अथवा पर्व–समारोहों पर श्राद्ध कर्म करने का विधान देव–संस्कृति में है।

श्राद्ध किस तत्त्व पर टिका है? शरीर के नष्ट हो जाने पर भी जीव का अस्तित्व नहीं मिटता। वह सूक्ष्म रूप में हमारे चारों ओर वातावरण में घूमते रहते हैं। जीव का फिर भी अपने परिवार के प्रति कुछ–न–कुछ ममत्व रह जाता है। सूक्ष्म आत्मायें आसानी से सब लोकों से आकर हमारे चारों ओर चक्कर लगाया करती हैं। हमारे विचार और भावनायें इस सूक्ष्म वातावरण में फैलते हैं। इन्हें हम जिस तेजी से बाहर के वातावरण में फेंकते हैं, ये उसी गति से दूर–दूर फैल जाते हैं। अतः श्राद्ध में किए गए पूर्वजों के प्रति हमारे आत्मीय, सद्भावना, कृतज्ञता के भाव उन आत्माओं के पास पहुँच जाते हैं। उसे उनसे सुख शान्ति, प्रसन्नता और स्वस्थता मिलती है।

श्राद्ध में हविष्यान्न पिण्डों के द्वारा श्रद्धाभिव्यक्ति की जाती है। ये पिण्ड साधन–दान के प्रतीक होते हैं। स्वर्गस्थ आत्माओं की तृप्ति के लिए तर्पण किया जाता है। जल की एक अञ्जलि भरकर कृतज्ञता के भाव से भरकर हम स्वर्गीय पितृ–देवताओं के चरणों में उसे अर्पित कर देते हैं। इस प्रकार श्रद्धा, प्रेम, कृतज्ञता, अभिनन्दन सभी का मिश्रित रूप श्राद्ध है।

योगवासिष्ठ के अनुसार मरने के समय प्रत्येक जीव मूर्छा का अनुभव करता है। वह मूर्छा महाप्रलय की रात्रि के समान होती है।

उसके उपरान्त प्रत्येक व्यक्ति स्वयं ही अपने स्वप्न और संकल्प के अनुसार अपने परलोक की सृष्टि करता है, यह बात इन श्लोकों में कही गयी है–

मरणादिमयी मूर्च्छा प्रत्येकेनानुभूयते।
यैषा तां विद्धि सुमते महाप्रलययामिनीम्।।
तदन्ते तनुते सर्गं सर्व एव पृथक् पृथक्।
सहज स्वप्नसंकल्पान्संभ्रमाचल नृत्यवत्।।

–योगवासिष्ठ ३।४०।३१ व ३२

इसी सन्दर्भ में आगे बताया गया है कि–
स्ववासनानुसारेण प्रेता एतां व्यवस्थितम्।
मूर्छान्तेऽनुभवन्त्यन्तः क्रमेणैवाक्रमेण च।।

योगवासिष्ठ ३।५५।२६

अर्थात् प्रेत अपनी–अपनी वासना के अनुसार ही भावनात्मक उतार–चढ़ावों का अनुभव करते हैं। मरे हुए व्यक्ति की प्रेतावस्था में जिन लोगों से आसक्ति जुड़ी रहती है, उनकी भाव संवेदनायें और उनकी परिस्थितियाँ–मन स्थितियाँ प्रेतों को तीव्रता से प्रभावित करती हैं। पिण्डदान और श्राद्ध कर्म का महत्त्व यही है कि उन क्रियाओं के साथ–साथ जो भावनायें जुड़ी होती हैं, वे प्रेतों–पितरों को स्पर्श करती हैं। इसी प्रकार पितरों के संस्कारों के अनुभव अपने प्रियपात्रों की स्थितियाँ उन्हें आन्दोलित करती हैं।

योगवासिष्ठ में बताया गय है कि मृत्यु के उपरान्त प्रेत यानी मरे हुए जीव अपने बन्धु बान्धवों के पिण्डदान द्वारा ही अपना शरीर बना हुआ अनुभव करते हैं–

आदौ मृता वयमिति बुध्यन्ते तदनुक्रमात्।
बंधु पिण्डादिदानेन प्रोत्पन्ना इति वेदिनः।।

योगवासिष्ठ ३।५५।२७

अर्थात् प्रेत अपनी स्थिति इस प्रकार अनुभव करते हैं कि हम मर गये हैं और अब बन्धुओं के पिण्डदान से हमारा नया शरीर बना है।

स्पष्ट है कि यह अनुभूति भावनात्मक ही होती है। अतः पिण्डदान का वास्तविक महत्त्व उससे जुड़ी भावनाओं के कारण होता है। जिसके प्रति आत्मीयता होती है, उसके भावनात्मक अनुदान से प्रेत प्रभावित होता है। क्योंकि मरणोत्तर जीवन की अनुभूतियाँ वासना और संस्कारों के प्रभाव की ही प्रतिच्छाया होती हैं। इसलिए जिससे आत्मीयता का संस्कार अंकित हो, उसकी भावनायें परलोकस्थ जीव को प्रभावित करती हैं।

गीता के ८ वें अध्याय में कहा गया है–"हे अर्जुन ! जो अन्त समय में जिन भावों का स्मरण करता हुआ देह छोड़ता है, उन्हीं भावों से अनुप्राणित होकर वैसा ही नया शरीर, नया व्यक्तित्व प्राप्त करता है।

संन्यासी से इसीलिए संन्यास लेते समय उसके श्राद्ध–संस्कार भी उसी के द्वारा करा दिए जाते हैं, कि उसकी कोई भी आकांक्षा आसक्ति सूक्ष्म रूप में भी शेष न रहे।

मरे हुए व्यक्तियों का श्राद्ध–कर्म से कुछ लाभ है कि नहीं? इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि होता है, अवश्य होता है। संसार एक समुद्र के समान है, जिसमें जलकणों की भाँति हर एक जीव है। विश्व एक शिला है, तो व्यक्ति एक परमाणु। जीवित या मृत आत्मा इस विश्व में मौजूद है और अन्य समस्त आत्माओं से सम्बद्ध है। संसार में कहीं भी अनीति, युद्ध, कष्ट, अनाचार, अत्याचार हो रहे हों, तो सुदूर देशों के निवासियों के मन में भी उद्वेग उत्पन्न होता है। जाडे और गर्मी के मौसम में हर एक वस्तु ठण्डी और गर्म हो जाती है। छोटा सा यज्ञ करने पर भी उसकी दिव्यगन्ध व भावना समस्त संसार के प्राणियों को लाभ पहुँचाती है। इसी प्रकार कृतज्ञता की भावना प्रकट करने के लिए किया हुआ श्राद्ध समस्त प्राणियों में शान्तिमयी सद्भावना की लहरें

पहुँचाता हैं। यह सूक्ष्म भाव तरंगे तृप्तिकारक और आनन्ददायक होती हैं। सद्भावना की तरंगें जीवित–मृत सभी को तृप्त करती हैं, परन्तु अधिकांश भाग उन्हीं को पहुँचता है, जिनके लिये वह श्राद्ध विशेष प्रकार से किया गया है।

शास्त्रों की तर्पण व्यवस्था–

श्राद्ध प्रक्रिया में देव तर्पण, ऋषि तर्पण, दिव्य मानव तर्पण, दिव्य पितृ तर्पण, यम तर्पण, मनुष्य पितृ तर्पण नाम से ६ तर्पण कृत्य किये जाते हैं। इन सबके पीछे भिन्न–भिन्न दार्शनिक पृष्ठभूमि है।

देव तर्पण अर्थात् ईश्वर की उन सभी महान् विभूतियों के प्रति श्रद्धाभिव्यक्ति जो मानव कल्याण हेतु निःस्वार्थ भाव से प्रयत्नरत हैं। वायु, सूर्य, अग्नि, चन्द्र, विद्युत् एवं अवतारी ईश्वर अंशों की मुक्त आत्माएँ इसके अन्तर्गत आती हैं।

ऋषि तर्पण व्यास, वशिष्ठ, याज्ञवल्क्य, कात्यायन, जमदग्नि, अत्रि, गौतम, विश्वामित्र, नारद, चरक, सुश्रुत, पाणिनि, दधीचि आदि ऋषियों के प्रति श्रद्धाभिव्यक्ति के निमित्त किया जाता है।

दिव्य मानव तर्पण अर्थात् उनके प्रति अपनी कृतज्ञता की अभिव्यक्ति, जो लोकमंगल के प्रति समर्पित हो, त्यागी जीवन जिए एवं विश्वमानव के लिये प्राणोत्सर्ग कर गए।

दिव्य पितृ वे, जो कोई बड़ी लोकसेवा तो न कर सके, पर व्यक्तिगत रूप से आदर्शवादी जीवन जी कर अनुकरणीय पवित्र सम्पत्ति अपने पीछे छोड़ गए।

यम अर्थात् जन्म मरण का नियंत्रण करने वाली शक्ति। कुमार्ग पर चलने से रोक लगाने वाली विवेक शक्ति ही यम है। इसकी निरन्तर पुष्टि होती रहे, मुत्यु का भाव बना रहे, इसलिये यमतर्पण किया जाता है।

अन्त में मनुष्य पितृ तर्पण की व्यवस्था है। इससे परिवार से सम्बन्धित दिवंगत नर–नारी, पिता, बाबा–परबाबा, माता, दादी, परदादी, पत्नी, पुत्र, पुत्री, चाचा, नाना, परनाना, भाई, बुआ, मौसी, सास–ससुर एवं अन्त में गुरु–पत्नी, शिष्य एवं मित्रगण आते हैं।

इस प्रकार श्राद्ध तर्पण की सार्वभौम व्यवस्था में सारे समुदाय के प्रति कृतज्ञता की अभिव्यक्ति समाहित है। यह मात्र कर्मकाण्ड तक सीमित न रहकर व्यवहार में उतरे, वसुधा एक विराट् परिवार है, इस भावना के रूप में साकार हो, उदार दानशीलता के रूप में लोकमंगल के कार्य बन पड़ें, तो ही इनकी सार्थकता है।

पितृपक्ष का हिन्दू धर्म एवं संस्कृति में विशेष माहात्म्य है। जो पितरों के नाम पर श्राद्ध और पिण्डदान नहीं करता, वह सनातन धर्मी, सच्चा देव संस्कृति का अनुयायी नहीं माना जा सकता। शास्त्र मान्यतानुसार मृत्यु होने पर मनुष्य की जीवात्मा चन्द्रलोक की तरफ जाती व ऊपर उठकर पितृलोक में पहुँचती हैं। उन मृतात्माओं को अपने नियत स्थान तक पहुँचने की शक्ति प्रदान करने–शान्ति देने के निमित्त ही पिण्डदान एवं श्राद्ध का विधान किया गया है। श्रद्धा से श्राद्ध शब्द बना है। श्रद्धापूर्वक किया गया कार्य ही श्राद्ध कहलाता है। श्राद्ध से श्रद्धा जीवित रहती है। हमारे अदृश्य सहायक पितर गण गुरुजनों एवं पूर्वजों के प्रति श्रद्धा प्रकट करने के निमित्त मात्र श्राद्ध–तर्पण के रूप में ही बन पड़ता है। मृत पितरों के प्रति कृतज्ञता के उन भावों का स्थिर रहना हमारी संस्कृति के अनुयाइयों ने वर्ष में १५ दिन का समय पृथक् निकाल लिया है। पितृभक्ति का इससे उज्ज्वल उदाहरण और कहीं देखने को नहीं मिलता है।

यह बात सदैव स्मरण रखना चाहिए कि यदि पितरों को सच्ची श्रद्धा दी जाएगी, उन्हें तृप्त रखा जाएगा तो वे निश्चय ही शक्ति, प्रकाश, प्रेरणा मार्गदर्शन, सहयोग व भावनात्मक अनुदान देंगे। पितरों के प्रति

व्यक्त की गयी कृतज्ञता उलटे लौटकर बहुगुणित होकर स्वयं पर बरसती है। अपनी मोटी बुद्धि को तार्किक बनाते हुए हमें परोक्ष जगत् के अस्तित्व को श्रद्धा के साथ स्वीकार करना चाहिए तथा वहाँ विद्यमान सहायक आत्माओं से सम्पर्क स्थापित कर उनके अनुदानों से लाभान्वित होना चाहिए।



मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।